चन्दामामा
मार्च १९७४
1 Re

Photo by: **A. L. SYED**

VITREOUS सैनेटरीवेयर वॉल टाइल्स

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बने हुए

हिन्दुस्तान सैनेटरीवेयर एण्ड इण्डस्ट्रीज़ लिमिटेड

सोमानी-पिलकिंगटन्स लिमिटेड

२ वेलेसली प्लेस, कलकत्ता-७०० ००१

बढ़ते बचपन का साथी – इन्क्रिमिन* !

ये छलकता उत्साह, ये चुस्ती, ये फुर्ती... ये हंसते खेलते तन्दरूस्त बच्चे... इन दिनों जब इनका शरीर दिन दुगनी रात चौगुनी गति से बढ़ता और विकसित होता, इन्हें इन्क्रिमिन जरूर दीजिये। लाभदायक विटामिन, लोहतत्व और आवश्यक अमीनो एसिडसंयुक्त इन्क्रिमिन बढ़ते बच्चों के लिये बहुत आवश्यक।

इन्क्रिमिन*

इन्क्रिमिन टॉनिक – बढ़ते बच्चों के लिये वरदान!

डॉक्टरों का विश्वासपात्र नाम Lederle सायनामिड इन्डिया लिमिटेड का एक विभाग।

*अमेरिकन सायनामिड कम्पनी का रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क।

SISTAS-INC-3068A HIN

3

everest/507/PP Hin

प्रत्येक पुस्तकालय में रखने योग्य!

★

'SONS OF PANDU'
Rs. 5-25

'THE NECTAR OF THE GODS'
Rs. 4-00

अंग्रेज़ी में रचित: लेखिका
श्रीमती मधुरम भूतलिंगम

भेंट देने व संग्रह करने योग्य
बालकोपयोगी पुस्तकें!

★

आज ही आदेश दें:

डाल्टन एजेन्सीस

'चन्दामामा बिल्डिंग्स'
मद्रास-६०० ०२६

स्वान (इण्डिया) प्राइवेट लिमिटेड
अलमानी चैम्बर्स, फि. मेहता रोड, बम्बई-१ बी.आर.
शाखा: १४बी, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली-१

hero's-SI-1148 HN

Statement about ownership of CHANDAMAMA (Hindi)
Rule 8 (Form IV), Newspapers (Central) Rules, 1956

1. *Place of Publication*	...	'CHANDAMAMA BUILDINGS' 2 & 3, Arcot Road Vadapalani, Madras-600 026
2. *Periodicity of Publication*	...	MONTHLY 1st of each calendar month
3. *Printer's Name*	...	B. V. REDDI
Nationality	...	INDIAN
Address	...	Prasad Process Private Limited 2 & 3, Arcot Road, Vadapalani Madras-600 026
4. *Publisher's Name*	...	B. VISWANATHA REDDI
Nationality	...	INDIAN
Address	...	Chandamama Publications 2 & 3, Arcot Road, Vadapalani Madras-600 026
5. *Editor's Name*	...	CHAKRAPANI (A. V. Subba Rao)
Nationality	...	INDIAN
Address	...	'Chandamama Buildings' 2 & 3, Arcot Road, Vadapalani Madras-600 026
6. *Name & Address of individuals who own the paper*	}	Chandamama Publications PARTNERS: 1. Sri B. Nagi Reddi 2. Smt. B. Padmavathi 3. Smt. B. Bharathi 4. Sri B. V. Sanjaya Reddi (Minor) 5. Sri B. N. Suresh Reddi ,, 6. Sri B. V. Satish Reddi ,,

I, B. Viswanatha Reddi, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

B. VISWANATHA REDDI
Signature of the Publisher

1*st March* 1974

चन्दामामा
संस्थापक : नागिरेड्डी
संचालक : 'चक्रपाणी'
इस महीने की बेताल कथा नीति प्रधान है। साधारणत: कोई किसी के साथ द्वेष करे तो उसके साथ अपने भीतर के किसी एक अंश के साथ द्वेष करते हैं। गरीब अपनी गरीबी के साथ द्वेष करने के कारण धनियों के साथ द्वेष करते हैं, इन सभी द्वेषों का मूल आधार कोई एक द्वेष ही प्रतीत होता है। गुलाम जब तक अपनी गुलामी के साथ द्वेष करना शुरू नहीं करेंगे, तब तक वे अपने मालिकों के साथ भी द्वेष नहीं करते।
वर्ष : २६ मार्च १९७४ अंक : ९
CP
CHITRA

विद्वा नेव विजानाति विद्वज्जन परिश्रमम्,
न हि वंध्या विजानाति गुर्वीम् प्रसववेदनाम् । ॥ १ ॥

[विद्वानों का परिश्रम विद्वान ही जानते हैं, भयंकर प्रसववेदना को बाँझ औरत क्या जाने?]

विद्या नाम नरस्य रूप मधिकम्, प्रच्छन्नगुप्तम् धनम्,
विद्या भोगकरी, यशस्सुख करी, विद्याणाम् गुरुः,
विद्या बंधुजनो विदेशगमने, विद्या परा देवता,
विद्या राजसु पूज्यते, न हि धनम्, विद्याविहीनः पशुः । ॥ २ ॥

[विद्या मानव के लिए सौंदर्य है, गुप्त धन है, भोग, यश और सुख भी प्रदान करती है, वह गुरुओं के लिए गुरु है, विदेशों में बंधु जैसी है, परदेवता है, राजा उसकी पूजा करते हैं, धन की नहीं करते, इसलिए विद्याविहीन व्यक्ति विचित्र पशु के समान है ।]

वित्तम्, बन्धु, वंयः, कर्म, विद्या भवति पंचमम्,
एतानि मान्यस्थानानि तुरीयो यद्य दुत्तरम् । ॥ ३ ॥

[आदर करने योग्य धन, बंधु, वय, कर्म और विद्या नामक पांच वस्तुओं में से क्रमशः एक दूसरे से उत्तम है ।]

यक्ष पर्वत

[२१]

[पहाड़ी दुर्ग के पास वीरपुर के घुड़सवारियों के द्वारा पराजित हो स्वर्णाचारी कुछ ऊँट योद्धाओं के साथ जंगल में भाग गया। वहाँ पर उसे खड्गवर्मा, जीवदत्त और समरबाहु दिखाई दिये। गुरु भल्लूक ने अपने शिष्यों की गुरुभक्ति को साबित कराने के लिए एक शिष्य को पेड़ पर से कूदने का आदेश दिया। बाद–]

गुरु भल्लूक का शिष्य पेड़ पर से कूद पड़ा। तभी जीवदत्त दौड़कर गया और उसके नीचे गिरने के पहले ही दस-बारह फुट के ऊपर अपने दण्ड को आडे रख दिया, जब भल्लूक जातिवाला ज़मीन पर गिरने के पहले ही उस दण्ड पर गिरा तब जीवदत्त ने उसे अपने हाथों से पकड़कर संभाला और उसे ज़मीन पर खड़ा कर दिया।

भल्लूक युवक को कोई चोट न आयी, पर उसे इस बात की चिंता हुई कि वह ज़मीन पर गिरकर प्राण त्याग करके अपनी गुरुभक्ति को साबित नहीं कर पाया, इसलिए वह बोला–"महाशय, ज़मीन पर गिरने के पहले मुझे पकड़कर आपने मेरी जान बचायी, लेकिन मेरे मरकर स्वर्ग पहुँचनेवाले मौक़े को आपने बिगाड़ दिया।"

उसकी बातों पर जीवदत्त हँसकर बोला– "अरे, कौन जानता है कि तुम ज़मीन पर गिरकर स्वर्ग पहुँच जाते या नरक? पर तुमने यह साबित कर दिया कि तुम अपने गुरु की आज्ञा को भगवान की आज्ञा मानते हो। मैंने तुम्हें इसलिए बचाया कि आगे तुम्हें तुम्हारे गुरु और समरबाहू की बड़ी मदद करनी होगी।"

तब तक वहाँ पर गुरु भल्लूक, समरबाहू और खड्गवर्मा आ पहुँचे। गुरु भल्लूक बड़ी प्रसन्नता के साथ खड्गवर्मा तथा जीवदत्त से बोला–"हुज़ूर! आप लोगों ने मेरे शिष्यों की गुरुभक्ति खुद देख ली है। अब आप इन्हें जिस काम में उपयोग करना चाहते हो, सो कीजिए। यदि समरबाहू इन जंगली प्रदेशों का राजा और स्वर्णाचारी मंत्री बन जाये, तो मेरे सुरंग दुर्ग में वृकेश्वरी देवी की पूजा बिना रोक-टोक के चल सकेगी। मैं इससे बढ़कर कुछ और नहीं चाहता।"

"भल्लूक! उन देवी की पूजाओं के द्वारा दूसरों के प्राणों के लिए कोई खतरा न हो, इसे देखने की जिम्मेदारी समरबाहू की है।" जीवदत्त ने समझाया, तब गुरु भल्लूक के शिष्यों की ओर देख कहा– "इस पेड़ से कूदनेवाले के साथ एक और व्यक्ति आगे आ जाओ। मैं तुम दोनों को जो काम सौंपता हूँ, उसे पूरा करके लौटना होगा।"

गुरु भल्लूक ने अपने शिष्यों में से एक और व्यक्ति को निकट बुलाकर उसे पेड़ से कूदनेवाले व्यक्ति के बाजू में खड़े हो जाने को कहा। तब जीवदत्त ने उन दोनों को परखकर उच्च स्वर में कहा–"अरे, तुम दोनों को एक काम पूरा करके लौटना होगा। इस कार्य में भले ही तुम लोगों की जान चली जाय, मगर हमारा रहस्य किसी भी हालत में प्रकट नहीं करना है। देखो, सामनेवाले जंगलों में कहीं वीरपुर के सैनिक होंगे। तुम लोग ऐसा अभिनय करो कि जान-बूझकर नहीं, असावधानी से

उनके हाथों में फँस गये हो! इस तरह तुम दोनों उन घुड़सवारों से जा मिलो। इसके बादे उन्हें विश्वास करने लायक़ ढंग से समझा दो कि पहाड़ी दुर्ग से भाग गये समरबाहू के सभी अनुचर तुम्हारे गुरु के सुरंग दुर्ग में छिपे हुए हैं। समझें!"

"महाशय, इसमें ऐसी कौन बात है जो हमारी समझ में न आवे। यह गुरूजी का काम ही नहीं, बल्कि राजा का भी काम है। हम उन घुड़सवारों से मिलेंगे, उनसे आपके कहे मुताबिक़ बता कर अपना काम पूरा करेंगे। आप हम पर विश्वास रखिए।" गुरु भल्लूक के दोनों शिष्यों ने बताया।

"तब तो जल्दी रवाना हो जाओ, देरी ही क्यों?" जीवदत्त ने कहा।

दोनों शिष्यों ने अपने गुरु भल्लूक के सामने साष्टांग प्रणाम किया। भल्लूक ने उनके सिरों पर हाथ रखकर भीकर स्वर में कहा—"वे घुड़सवार दुश्मन तुम दोनों को गुप्तचर समझ कर सच बताने के लिए खूब सतायेंगे, वे तुम्हारे प्राण भी लेने को तैयार हों जाएँ फिर भी हमारे रहस्य उन्हें न बताना, समझें।"

गुरु भल्लूक के दोनों शिष्यों ने सिर झुका कर कहा—"गुरु भल्लूक! आपकी आज्ञा बृकेश्वरी देवी की आज्ञा के समान है।" यों बता कर वहाँ से निकल पड़े।

दोनों बड़ी देर तक जंगलों में घूमते रहें। आख़िर तीसरे पहर में एक पेड़ के नीचे वीरपुर के घुड़सवारों को देखा। चार घुड़सवार घोड़ों से उतर कर बात कर रहे थे। उन्हें देखने पर ऐसा लगता था कि वे स्वर्णाचारी के अनुचरों की खोज़ करते जंगलों में बड़ी दूर तक घूम कर थक गये हो।

घुड़सवारों को पेड़ों की ओट में से देखने के बाद भल्लूक के शिष्यों ने पल-भर आपस में सलाह-मशविरा किया और ऊँचे स्वर में चिल्लाना शुरू किया—"गुरु भल्लूक! आप कहाँ हैं? हम दोनों यहाँ पर हैं।"

ये चिल्लाहटें सुनते ही पेड़ के नीचे स्थित वीरपुर के घुड़सवार चौंक पड़े। उस दल के नायक ने झट म्यान में से तलवार खींच कर अपने अनुचरों से कहा—"वे चिल्लानेवाले लोग कौन हैं? हमने कुछ दिन पहले सुना था न, भल्लूक जाति के लोगों के बारे में? वे ही मालूम होते हैं। हमारे प्राणों के लिए यह नया खतरा आया मालूम होता है। चलो, न मालूम वे कितने लोग हैं? ख़बरदार! सावधानी से आगे बढ़ो!"

घुड़सवारों को अपने पास ही आते देख कर भल्लूक के दोनों शिष्यों ने अपने हाथ की तलवारें नीचे डाल दीं और बोले—"महाशय, हम को मार न डालिए। हम आपके आधीन हो जाते हैं। लगता है कि हमारे गुरु को दुश्मन ने पकड़ लिया है। अब हम किनके वास्ते जीवें।"

घुड़सवार के दल का नेता अचरज में आकर बोला—"क्या तुम्हारे गुरु को दुश्मन ने पकड़ लिया है? कौन है वह दुश्मन?"

भल्लूक के शिष्यों में से एक बोला—"हुजूर, आज सुबह ऊँटों पर सवार कुछ लोग अचानक आ धमके और हमारे सुरंग के दुर्ग में घुस पड़े। उस वक़्त हम लोग देवी की पूजा में निमग्न थे। इस वजह से हम उनका सामना करके लड़ नहीं पाये। उन दुष्टों ने हम में से कुछ लोगों को मार डाला। उनसे बचकर हम में से कुछ लोग अपने गुरु के साथ भाग कर इस जंगल में आ गये। मगर हमारे गुरु का कहीं पता नहीं चल रहा है! हम उन्हीं को ढूंढ़ रहे हैं।"

भल्लूक जाति के लोगों के मुंह से जब यह बात निकली तब वीरपुर के दल के नायक को लगा कि ऊँटों पर आनेवाले लोग पहाड़ी दुर्ग से भाग गये स्वर्णाचारी और उसके अनुचर होंगे। उसने दो घुड़सवारों को पहाड़ी दुर्ग के पास जाने का आदेश देते हुए कहा—"तुम लोग जाकर हमारे सेनापति से कह दो कि हमारे दुश्मन

इस प्रदेश में एक सुरंग दुर्ग में छिपे हैं। सेना सहित उनके आते ही हम लोग पहाड़ी दुर्ग के पास जायेंगे।"

दो घुड़सवार अपने घोड़ों को पहाड़ी दुर्ग की ओर सरपट दौड़ाने लगे। तब उस दल के नायक ने भल्लूक के शिष्यों से कहा–"तुम दोनों ने हमारे दुश्मन का पता बताकर हमारी बड़ी मदद की। हमारे सेनापति के आते ही तुम्हें उचित इनाम दिये जायेंगे।"

इनाम की बात सुनते ही दोनों शिष्य अनिच्छापूर्वक सिर हिलाते बोले–"हुजूर! हम देवी के उपासक हैं। हमें इनामों की क्या जरूरत है? हमारे गुरुजी का पता लग जाय तो हम बहुत खुश हो जायेंगे। बस, हमें आज्ञा दीजिये। अपने गुरु की खोज करेंगे।" यों कहते दोनों वहाँ से निकल पड़े।

इस पर दल के नायक ने झट घोड़े पर से झुककर एक शिष्य की भुजा पकड़ ली और गुस्से में आकर कहा–"ठहर जाओ, कहाँ जाते हो? हमें कैसे मालूम होगा कि सुरंग दुर्ग कहाँ पर है? उसे तुम्हीं लोगों को हमें दिखाना होगा, समझे?"

"हुजूर! वह सुरंग दुर्ग यहाँ से बिलकुल नजदीक में ही है। वहाँ तक जानेवाला रास्ता हम दिखा देंगे। अगर उस दुर्ग में हमारे गुरु ऊँटों के दल के लोगों के हाथों में बंदी हो गये हों तो उन्हें छुड़ाने में आपको हमारी मदद करनी होगी।" एक शिष्य ने निवेदन किया।

"उस दुर्ग पर अधिकार करने के बाद वहाँ के लोगों में से राजद्रोही कौन हैं और हमारे हितैषी कौन? इसका निर्णय तो हमारे सेनापति करेंगे। हम सब मिलकर उस सुरंग दुर्ग के पास जायेंगे। तुम दोनों इस पेड़ के नीचे ही ठहर जाओ।" दल के नायक ने आज्ञा दी।

दो घुड़सवारों ने जब बीरपुर के सेनापति को सूचना दी कि ऊँटों पर सवार दुश्मन सुरंग के दुर्ग में छिपे बैठे हैं, तब

वह बहुत प्रसन्न हुआ और बोला–"इसका मतलब है कि वे सभी राजद्रोही एक साथ छिपे हुए हैं। उन सबको हो सके तो प्राणों के साथ बंदी बनाकर वीरपुर की गलियों में उनका जुलूस निकलवा दूंगा। इसके बाद सबको फाँसी पर चढ़ाना तो निश्चय है ही। आगे राजद्रोही बननेवालों के लिए यह एक अच्छा सबक़ होगा।"

इसके बाद वीरपुर का सेनापति कुछ घुड़सवारों तथा पैदल सेना को साथ ले दल के नायक की ओर चल पड़ा। उधर खड्गवर्मा तथा जीवदत्त ने पहले ही अनुमान लगाया था कि भल्लूक के शिष्यों की बातों पर यक़ीन करके वीरपुर के सैनिक सुरंग दुर्ग पर हमला करने ज़रूर आ जायेंगे और वे समरबाहू, गुरु भल्लूक तथा उसके शेष शिष्यों को साथ ले पहले ही सुरंग दुर्ग के पास पहुँचे।

थोड़ी ही देर में वीरपुर का सेनापति दल नायक से जा मिला। दल नायक ने उसे गुरु भल्लूक के शिष्यों को दिखाकर सारा समाचार सुनाया और उत्साहपूर्ण शब्दों में कहा–"महाशय! वे सभी राजद्रोही हमारे जाल में फँस जायेंगे।"

सेनापति ने भल्लूक के शिष्यों की ओर तलवार दिखाकर पूछा–"अरे कमबख़्त भल्लूक जाति के दुष्टो, तुम सच सच बता रहे हो या इसमें तुम्हारे गुरु की कोई चालबाजी भी है?"

भल्लूक के शिष्य तलवार को देख ज़रा भी विचलित हुए बिना बोले–"हुज़ूर! हम वृकेश्वरी देवी की वाणी सुनाते हैं, इसमें रत्ती भर भी झूठ नहीं है। ऊँटों के सवारों का वध करके आप उस सुरंग दुर्ग को फिर से हमारे गुरु के हाथ सौंप दीजिए।"

"अरे, पहले उस दुर्ग में छिपे हुए लोगों को बाहर खदेड़ने दो। बाद को मैं सोचूँगा कि उस दुर्ग को किसके हाथ सौंपना है?" सेनापति ने कहा। फिर उसने अपने सैनिकों को आदेश दिया–

"तुम सबको चुपचाप उस सुरंग दुर्ग तक पहुँचना है। अरे कमबख्त भल्लूको, तुम दोनों आगे चलते हमें रास्ता दिखाओ। अगर इसमें कोई धोखा-दगा रहा तो तुम्हें वहीं पर अपनी तलवार से टुकड़े-टुकड़े कर दूँगा।"

आगे आगे चलते भल्लूक के शिष्य रास्ता दिखा रहे थे। उनके पीछे सेनापति और सैनिक आध घड़ी चलकर सुरंग दुर्ग के पास पहुँचे। उस वक़्त सुरंग दुर्ग पर एक भी व्यक्ति न था। उसके चारों तरफ़ ऊंचे पेड़, टीले और कंटीली झाड़ियां फैली हुई थीं। सर्वत्र निस्तब्धता छाई हुई थी।

सेनापति सबसे पहले घोड़े से उतरा, सुरंग दुर्ग के आगे जाकर नीचे की ओर झांक कर देखा और उच्च स्वर में पुकार उठा–"अरे सुरंग में छिपे मेरे दुश्मनो, ऊपर मैं याने वीरपुर का सेनापति बड़ी सेना के साथ आया हुआ हूँ। दो-तीन मिनट के अंदर तुम सब अपने हथियार सुरंग में ही छोड़कर खाली हाथ ऊपर आ जाओ और मेरे अधीन हो जाओ, वरना मैं सुरंग में उतरकर तुम सबके सर काट दूँगा।"

मगर सुरंग में से कोई जवाब नहीं आया। सेनापति दो-तीन मिनट तक जवाब का इंतज़ार करता रहा, तब उसने अपने सभी अनुचरों को घोड़ों को पेड़ों के नीचे छोड़ अपने निकट आने का आदेश दिया। घोड़ों पर पहरा बिठाया गया। सब लोग जब उसके निकट आये तब पैदल सैनिकों को भी साथ ले भल्लूक शिष्यों को आदेश दिया–"अरे, तुम दोनों सुरंग के सभी रास्तों से परिचित हो, इसलिए आगे रहकर हमें रास्ता दिखाओ।"

भल्लूक के शिष्यों ने कोई आपत्ति नहीं उठायी और सुरंग में प्रवेश किया। उनके पीछे सेनापति और सैनिक भीतर उतर पड़े। वे सब जब सुरंग में ओझल हो गये, तब अचानक झाड़ियों की ओर में से भल्लूक जाति के चार सिपाही बाहर आये

और पहरा देनेवाले दो बीरपुर के सैनिकों पर टूट पड़े। उनके चिल्लाने के पहले ही भल्लूक जाति के लोगों ने भालों से उन पर प्रहार किया, वे ज़मीन पर गिरकर छटपटा रहे थे, तब उन्हें अपने कंधों पर डाल झाड़ियों के पीछे उन्हें फेंक दिया।

उसी समय जीवदत्त समरबाहू और गुरु भल्लूक के साथ वहाँ पर आया और बोला—"भल्लूक! तुम्हारे शिष्यों को चाहिए था कि उन पहरेदारों को बुरी तरह से मार न डालते! उनके हाथ-पैर बांधकर झाड़ियों की ओट में डाल देते तो काम चल जाता।"

गुरु भल्लूक उस सवाल का कोई जवाब दिये बिना अपराधी जैसे सिर झुकाकर मौन रह गया। समरबाहू घोड़ों की ओर देख उत्साह में आया और बोला—"जीवदत्त! मेरे अनुचरों के सवार करने के लिए ऊंटों के साथ घोड़े भी मिल गये हैं।"

"अरे भाई, अभी यह मत सोचो कि हमने शत्रु का निर्मूल किया है। समरबाहू, हमारी जटिल समस्या अब यह है कि हम वीरपुर के सेनापति को प्राणों के साथ कैसे पकड़ पायेंगे? सुरंग में रहनेवालों को डराने के लिए एक उपाय है। तुम अपने अनुचरों से कहो, सूखी लकड़ियाँ जलाकर सुरंग के द्वार तक ले आवे।" जीवदत्त ने कहा।

भालू जाति के लोग तथा समरबाहू के अनुचर आसपास से सूखी लकड़ियाँ बीनकर लाये, सुरंग के द्वार के पास जमा करके उनमें आग लगा रहे थे, तभी जीवदत्त ने सुरंग के भीतर झांककर देखते हुए कहा—"हे बीरपुर के सेनापति! तुम और तुम्हारे सैनिक हथियार सुरंग में डाल कर दो-तीन मिनटों में बाहर आ जाओ, ऐसा नहीं किया तो राजा समरबाहू के सैनिक और जंगली युवक सुरंग में उतरकर तुम सब का वध कर डालेंगे।"

(और है)

पुरुषद्वेषिणी

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया।

पेड़ पर से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा–" राजन, तुम्हारे इस काम को देखने पर मुझे यह संदेह होता है कि तुम भी विश्वमित्र जैसे नारी के द्वेष का शिकार हो गये हो। श्रम को भुलाने के लिए तुम्हें विश्वमित्र की कहानी सुनाता हूँ; सुनो।"

बेताल यों कहने लगा: प्राचीनकाल में श्रीपुर में विश्वमित्र नामक एक धनी युवक रहा करता था। वह अत्यंत विशाल हृदयी तथा उदार स्वभाव का था। जब वह किशोर ही था, तभी उसके माता-पिता का देहांत हो गया। इसलिए उसके निकट रिश्तेदार और मित्रों ने उसकी देखभाल की और उसके विवाह के योग्य होते ही

बेताल कथाएँ

पड़ोसी गाँव की एक सुंदर कन्या के साथ उसका विवाह किया ।

विश्वमित्र की पत्नी मित्रविंद सुंदर ज़रूर थी, मगर वह अपने पति के लिए अनुकूलवती न थी, वह हर बात में अपने पति से छिड़ती व खीझती रहती थी । वह मित्रविंद के निकट जाता तो ऐसा अनुभव करती, मानो उसके शरीर पर सांप और बिच्छू रेंग रहे हो! विश्वमित्र मित्रविंद के सौंदर्य पर मुग्ध था, उसने सोचा कि मित्रविंद के माता-पिता ने उसकी इच्छा के विरुद्ध यह विवाह किया है, मगर उसकी बातों से मालूम हुआ कि विश्वमित्र की यह धारणा गलत है । वह न केवल अपने पति से द्वेष करती है, बल्कि पुरुष जाति से ही उसकी ईर्ष्या है ।

एक बार मित्रविंद ने बातचीत के दौरान कहा था–"पुरुष औरतों के लिए भूतों के समान हैं । किसी भी बुद्धिमति औरत को विवाह नहीं करना चाहिए । मैंने शादी करने से साफ़ इनकार किया, फिर भी मेरे माता-पिता ने ज़बर्दस्ती मेरी शादी की ।"

यह बात सुनने पर विश्वमित्र के मन में यह आशा पैदा हो गयी कि अगर वह यह साबित कर सके कि सभी पुरुष औरतों के साथ भूतों जैसा व्यवहार नहीं करते और वह अपनी पत्नी को ज़्यादा सुखी रख सकता है, यह बात मालूम होने पर मित्रविंद के व्यवहार में परिवर्तन हो सकता है । इस उद्देश्य के साथ विश्वमित्र मित्रविंद के साथ ज़बदस्ती दांपत्य जीवन बिताने लगा कि दांपत्य-सुख का अनुभव पाने पर मित्रविंद की मानसिक स्थिति में परिवर्तन हो सकता है ।

लेकिन उसकी आशा सफल न हुई । दांपत्य सुख मित्रविंद के व्यवहार में कोई परिवर्तन ला नहीं पाया । वह विश्वमित्र के साथ द्वेष करती ही गयी ।

इतने में वह गर्भवती हो गयी । इस पर विश्वमित्र ने सोचा कि बच्चे पैदा

हो जाने के बाद उसका मातृत्व निखर आएगा तो मित्रविंद में परिवर्तन होगा।

समय पर मित्रविंद ने जुड़वे बच्चों का जन्म दिया। मगर उसमें द्वेष की भावना घटने के बदले बढ़ गयी। वह यह सोचकर व्याकुल होने लगी कि वह पहले ही अपने पति से परेशान है, तो उल्टे ये दो-बच्चे भी उसके गले मढ़ गये।

अब विश्वमित्र के मन से बिलकुल यह भ्रम जाता रहा कि उसकी पत्नी में मानसिक परिवर्तन होगा और वह अनुकूलवती बनेगी। एक दिन वह अपनी पत्नी या मित्रों से कहे बिना ही घर छोड़कर जंगलों में चला गया। जंगल में विश्वमित्र को एक वृद्ध सिद्धयोगी दिखाई दिया। उसने विश्वमित्र को देख कहा–"बेटा, यदि तुम्हें कोई जल्दी का काम न हो तो एक घड़ी ठहर जाओ, मैं इस बीच अपनी देह त्यागने जा रहा हूँ। मैं तुम्हें कामरूप विद्या प्रदान करूँगा। इसके बदले में तुम मेरे इस शव का दहन-संस्कार करो और अपने रास्ते चले जाओ।"

विश्वमित्र ने सिद्धयोगी के शव का दहन-संस्कार करने को मान लिया। सिद्ध ने उसे कामरूप विद्या दान करके अपने प्राण त्याग दिये। विश्वमित्र ने वहीं पर चिता सजाई और सिद्ध के कलेवर का दहन-संस्कार करते खड़ा रहा, तभी उसके मन में कोई विचार आया। तुरत वह श्रीपुर को लौट आया।

विश्वमित्र जब अपने गाँव पहुँचा, तब तक रात हो चली थी। उसने कामरूप विद्या के द्वारा एक नारी का रूप धर लिया, अपने घर के सामने रहनेवाले देवदत्त नामक युवक के घर का द्वार खटखटाया।

देवदत्त जाग पड़ा। उसने दर्वाज़ा खोलकर देखा तो अपने सामने अप्सरा जैसी एक युवती को देख उसकी नींद की खुमारी जाती रही।

"मेरा नाम सुमित्रा है। मैं दूर देश की निवासिनी हूँ। मैं अपने माता-पिता के साथ इस देश को आ रही थी रास्ते में डाकुओं ने हमको लूटा और मेरे माता-पिता को मार डाला। मैं अपने प्राण बचाकर भाग आयी हूँ। क्या आप आज की रात को मुझे आश्रय दे सकते हैं?" नारी रूप में स्थित विश्वमित्र ने कहा।

"अच्छी बात है! मैं तुम्हें आश्रय दूंगा। लेकिन कल तुम्हें कौन आश्रय देगा? तुम कहाँ जाओगी? मैं तुम्हारे साथ शादी करूँगा। तुम यहीं पर रह जाओ।" देवदत्त ने समझाया।

सुमित्रा ने भी मान लिया। दूसरे दिन शास्त्र-विधि से उन दोनों का विवाह संपन्न हुआ। शीघ्र ही मित्रविंद तथा सुमित्रा के बीच मैत्री हुई। सुमित्रा मित्रविंद के बच्चों को बहुत चाहने लगी। वह सदा उन्हें लाड़-प्यार देती और उन्हें खिलाती। वे बच्चे भी अपनी माँ की अपेक्षा सामने की घरवाली सुमित्रा के साथ ज़्यादा हिल-मिल गये।

सुमित्रा का अपने पति के संबंध में प्यार दिखाना और बच्चों के प्रति लाड़-प्यार जताना देख मित्रविंद भी आश्चर्य में आ गयी। सुमित्रा यह भांपती रही कि धीरे-धीरे मित्रविंद में कोई परिवर्तन हो रहा है। वह अब अपने बच्चों के द्वारा थोड़ा-बहुत सुख का अनुभव करने लगी।

एक बार मित्रविंद ने सुमित्रा से कहा—"तुम्हारी जिंदगी पुष्पित वृक्ष

जसी है, लेकिन मेरी ज़िंदगी ठूँठ के समान है।"

इस पर सुमित्रा न पूछा–"हाँ, मैं भी कई दिनों से तुम्हारे बारे में जानना चाहती थी, लेकिन भूलती गयी। बच्चों के बाप किस देश में गये हैं? कब लौट आनेवाले हैं?"

मित्रविंद की आँखों में आँसू छलछला उठे। उसने कहा–"मुझ जैसी ठूँठ से विरक्त होकर वे घर-द्वार छोड़ चले गये हैं। अब लौटकर क्या आवेंगे?"

जब सुमित्रा के रूप में स्थित विश्वमित्र को यह विश्वास हो गया कि उसकी पत्नी का मन बिल्कुल बदल गया है, तब वह कामरूप विद्या के द्वारा फिर विश्वमित्र बना और सारी बातें समझाकर बोला–"मैंने अपने अनुभव से जान लिया कि औरत को पति के द्वारा सुख और बच्चों का प्रेम अपार आनंद देते हैं। तुमने मेरे मन में औरत के प्रति बुरा भाव पैदा किया।"

मित्रविंद आनंदबाष्प गिराते विश्वमित्र के पैरों पर गिर पड़ी और बोली–"आप यह क्यों सोचते हैं कि सभी औरतें मुझ जैसी ही होती हैं। मेरी वजह से आप घर छोड़ जंगल में न जाकर किसी और युवती के साथ शादी करते तो आप इन कष्टों से बच जाते।"

"नहीं, नहीं, ऐसा मत कहो। किसी दूसरी युवती के साथ शादी करना चाहता तो मैं जंगल में क्यों चला जाता? इसकी वजह तुम नहीं हो! नुम में मैं परिवर्तन न ला सका, इसीलिए मेरे मन में विरक्ति पैदा हो गयी। मैंने तुम्हीं को पत्नी के रूप में चाहा था। लेकिन तुम जिस रूप में व्यवहार करती थी, उस रूप में नहीं?"

इसके बाद वे दोनो अत्यंत प्रेमपूर्वक रहे। मित्रविंद ने अनुभव किया कि उसकी जैसी भाग्यशालिनी औरत दुनिया में दूसरी कोई न होगी।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा–"राजन, इस सृष्टि के भीतर असंख्य

आनंदमय रूपों के होते विश्वमित्र ने चाहकर नारी का रूप क्यों धारण किया? धारण किया भी हो, तो वह अपने घर के समीप क्यों आया? पुरुषों के भीतर नये रूप से किसी अच्छाई को देखे बिना ही मित्रविंद ने पुरुषों के प्रति अपने द्वेष को कैसे बदल लिया? इन प्रश्नों का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा—"स्त्री और पुरुष एक ही जिंदगी के भागीदार हैं। उनका परस्पर प्यार करने का कारण भी उनका सम्मिलित जीवन ही है। उस जीवन में यदि किसी प्रकार का अभाव न हो तो स्त्री पुरुष के साथ तथा पुरुष स्त्री के साथ द्वेष नहीं कर सकते! मित्रविंद को केवल पुरुष द्वेषिणी बताना गलत है; वह स्त्री द्वेषिणी भी है। इसलिए विवाह करने की उसकी इच्छा न रही। अलावा इसके स्त्रीसहज दापत्य जीवन और मातृत्व के प्रति भी उसे ममता नहीं है। विश्वमित्र यह नहीं जानता था कि मित्रविंद स्त्रियों से भी द्वेष करती है। इसलिए उसे स्त्री के रूप में प्रसन्न करने का प्रयत्न करके असफल हुआ। स्त्री के भीतर सहज रूप में पुरुष के प्रति द्वेष होता है, या नहीं, यह जानने के लिए ही उसने नारी का रूप धारण किया। यदि स्त्री के जीवन में आनंद हो, तो उसे उसकी पत्नी भी देख ले, इस ख्याल से वह अपने घर के निकट आया। उसे यह मालूम हुआ कि स्त्री सहजभाव से अपने पति तथा बच्चों से द्वेषभाव नहीं रखती। स्त्री के प्रति द्वेषभाव के घटने के कारण ही मित्रविंद में यह परिवर्तन हो गया। सुमित्रा के व्यवहार से मित्रविंद अपने मन में से पुरुषद्वेष को दूर कर सकी। उसके भीतर से जब स्त्री के प्रति द्वेष की भावना गयी, तभी पुरुष के प्रति भी द्वेष जाता रहा।"

राजा के इस तरह मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

सच्चा दोस्त

एक धनी व्यापारी के एक पुत्र था। वह बुरी संगति में पड़ गया था। उसके पिता ने उसे कई बार समझाया कि नटखट और दगेबाजों के साथ मैत्री न करो। पर उसका अपने कपट मित्रों पर अपार विश्वास था, इस कारण उसने अपने पिता की चेतावनी पर कोई ध्यान न दिया। अपने पुत्र के व्यवहार में कोई परिवर्तन न देख पिता ने उसे अच्छा सबक़ सिखाना चाहा। एक दिन उसे निकट बुलाकर पूछा—"बेटा, हमें व्यापार के काम पर दूर के देशों में जाना है। हमारे रत्न किस के पास छिपावें?" पुत्र ने अपने एक प्रिय मित्र का नाम सुझाया। बाद को अपने पिता की अनुमति से उसने रत्नों की पेटी अपने मित्र के यहाँ छिपा रखा।

कुछ दिन बाद पिता-पुत्र अपने घर को लौट आये। पुत्र रत्नों की पेटी लाने अपने मित्र के यहाँ गया, शीघ्र ही लौटकर क्रोध पूर्ण शब्दों में बोला—"आप ने मेरे मित्र का जो अपमान किया है, इस पर वह बड़ा दुखी है! हमने उसके हाथ जो पेटी दी, सुनते हैं कि उसमें कंकड़ भरे हैं।"

पिता ने हँसकर कहा—"उस पेटी में चाहे जो भी चीज़ हो, तुम्हारे मित्र को पेटी खोलकर देखने की क्या ज़रूरत पड़ी? तुम अब समझ सकते हो न कि सचमुच उस पेटी में रत्न होते तो उसने क्या किया होता? मैंने अपने मित्र के पास भी रत्नों की एक पेटी छिपा रखी है, जाकर ले आओ।" पुत्र अपने पिता के मित्र के घर जाकर रत्नों की पेटी ले आया। खोलकर देखने पर उसमें भी सब कंकड़ निकले। तब जाकर पुत्र की समझ में आ गया कि सच्चे मित्र का व्यवहार कैसा होता है!

मेहनत का बोझ

गंगाराम दुनिया में अकेला था। उसका अपना कहनेवाला कोई न था। वह बचपन में गाँव के अमीरों के घर काम करते जो भी खाने को देते, खा लेता और बरामदे में चबूतरे पर सोते अपने दिन काटता आया। अब वह शादी के योग्य हो चुका था, उसके मन में शादी करने की इच्छा पैदा हुई। तोताराम की लड़की देखने में सुंदर थी। उस लड़की के साथ गंगाराम ने शादी करनी चाही।

उसने सीधे तोताराम के घर जाकर कहा–"महाशय, अपनी पुत्री का विवाह मेरे साथ कीजिए। मैं भी एक गृहस्थ बनना चाहता हूँ।"

'अबे, तुम जैसे राह भटकनेवाले के साथ में अपनी कन्या का विवाह करना नही चाहता। तुम से बन सके तो एक सौ रुपये का कन्या शुल्क देकर मेरी पुत्री के साथ शादी कर लो।" तोताराम ने साफ़ कहा।

"सौ रुपये कौन बड़ी बात है? पहाड़ के उस पार खूब मजूरी मिलती है। एक साल के अंदर सौ रुपये कमा लूँगा। लेकिन आपको अपने वचन का पालन करना चाहिए।" गंगाराम ने कहा।

"अच्छी बात है! तुम को मैं ठीक एक साल की मोहलत देता हूँ। सौ रुपये कमाकर लौट आओ। एक साल से ज्यादा हो गया तो मैं अपनी कन्या का दूसरी जगह विवाह करूँगा।" तोताराम ने कहा।

उसी दिन रवाना होकर गंगाराम पहाड़ के उस पार चला गया। वहाँ पर मजदूरी खूब मिलती है। साल में सौ रुपये बचाना मेहनत करनेवालों के लिए कोई बड़ी बात नहीं है। गंगाराम मेहनती था, काम चोर न था। गंगाराम एक अमीर के घर

वीरेन्द्र कुमार

गया और बोला–"महाशय, मैं पड़ोसी गाँव से मजदूरी करने आया हूँ। मुझे आप अपने पिछवाड़े की झोंपड़ी में रहने की अनुमति दीजिए।" अमीर ने कोई आपत्ति न उठाई, मान लिया।

गंगाराम एक दिन भी आराम किये बिना मेहनत करते रुपये जोड़ता गया। उन रुपयों को एक घड़े में डालता गया। रोज़ सोने जाने के पहले घड़े को दोनों हाथों से ऊपर उठाकर ऊपर-नीचे हिला देता, यह याद करता कि उसमें कितने रुपये जमा हो गये हैं और सौ के लिए कितने बाक़ी हैं, इसके बाद तोताराम की कन्या के साथ शादी करने के संबंध में सपने देखते सो जाता।

एक साल पूरा होने को था। घड़े में सौ चादी के रुपये जमा हो गये थे।

एक दिन गंगाराम अमीर के पास जाकर बोला–"महाशय, मैं अपने गाँव को लौट रहा हूँ, मुझे आज्ञा दीजिए।"

"तुमने कितने रुपये कमाए? हमारे गाँव में जो भी मजदूर आता है, खूब कमाता है, अमीर बनकर ही लौटता है।" अमीर ने कहा।

गंगाराम ने अपनी गठरी में से घड़ा निकालकर कहा–"कोई ज्यादा नहीं, सौ रुपये कमाया है।"

अमीर के मन में घड़े के सौ रुपये की बात सुनते ही लोभ पैदा हो गया। उसने गंगाराम से कहा–"गंगाराम, तुम-मेरे साथ ही दगा देते हो? तुम इस गाँव के लिए नये थे, इसलिए मैंने तुम को अपनी झोंपड़ी में रहने दिया, तो तुम मेरे ही घड़े की चोरी करते हो? राजा के पास में शिकायत करना चाहता हूँ, चलो।"

अमीर की फ़रियाद सुनकर राजा ने गंगाराम से पूछा–"तुमने यह धन कमाया है या चुराया है?"

"महाराज, मैं पहाड़ के उस पार से यहाँ पर कमाने के लिए ही आया हूँ, चोरी करने के लिए नहीं, कड़ी मेहनत

करके सौ चाँदी के रुपये मैंने बचाये और उन्हें इस घड़े में छिपा रखा था।" गंगाराम ने जवाब दिया।

"यह झूठ बोलता है। मैंने अपनी पत्नी को गहने बनवाने के वास्ते ठीक सौ रुपये इस घड़े में डाल रखे थे। हमारी बातचीत इसने सुन ली और मौक़ा पाकर हड़प लिया है।" अमीर ने कहा।

राजा यह निर्णय नहीं कर पाया कि किसकी बात को सच माने, तब मंत्री ने कहा—"वह घड़ा मेरे हाथ दे दो, कल तुम लोगों के झगड़े का फ़ैसला किया जाएगा।"

उस रात को मंत्री ने ठीक वैसे ही कुछ और घड़े मंगवाये, कुछ में सौ से कम और कुछ घड़ों में सौ से ज्यादा रुपये डाल दिये, तब उसने गंगाराम के घड़े को भी उन घड़ों में मिला दिया।

दूसरे दिन दरबार में मंत्री ने सभी घड़ों को एक जगह रखा और पूछा—"अमीर साहब, क्या आप अपने घड़े को पहचान सकते हैं?"

"सब घड़े एक समान हैं। मैं अपने घड़े को कैसे पहचान सकता हूँ?" अमीर ने कहा।

इसके बाद मंत्री ने गंगाराम से भी यही सवाल पूछा।

गंगाराम ने आगे बढ़कर एक एक घड़े को हाथ में लिया। उसे ऊपर-नीचे हिलाकर कहा—"महाराज, यही मेरा घड़ा है। इसमें ठीक सौ रुपये हैं। बाक़ी घड़ों में सौ से कम या ज्यादा रुपये हैं।"

मंत्री ने घड़े के रुपये गिनकर देखा, उसमें ठीक सौ रुपये थे। यह साबित हुआ कि गंगाराम निर्दोष है। मेहनत का बोझ मेहनत करनेवाला ही जानता है; बैठे बैठे कमानेवाला क्या जाने? इसके बाद राजा ने अमीर से गंगाराम को दो सौ रुपये दिलाये। गंगाराम ने वे रुपये ले जाकर तोताराम की कन्या से शादी की और आराम से रहने लगा।

भाई का हिस्सा

धर्मपुरि में एक धर्मात्मा राजा था। वह प्रति वर्ष अपनी प्रजा में अन्न और वस्त्र बाँटा करता था। उस वक्त राजा सभा बुलाता, प्रजा को समझा देता कि वह कैसे शासन करता है, तब कहता–"सारी प्रजा मेरे भाई है। मेरी सारी संपत्ति प्रजा की है।" यह बात सुनकर एक आदमी राज दरबार में आया और बोला–"मैं राजा का एक भाई हूँ, मुझे राजा से मिलना है।"

राजा ने उस व्यक्ति को दरबार में बुला भेजा और पूछा–"कहो, बात क्या है?"

"आप की प्रजा में से मैं भी एक भाई हूँ। आप की संपति में से मैं अपना हिस्सा माँग कर ले जाने को आया हूँ।" उस व्यक्ति ने जवाब दिया।

राजा ने गणकों को बुलाकर आदेश दिया–"हमारे राज्य की जनसंख्या और खजाने के धन का हिसाब करो, उस धन को सब लोगों में बराबर बाँट दे तो प्रत्येक व्यक्ति को कितना मिलता है, इसका पूरा हिसाब लगाओ।"

गणकों ने हिसाब लगाकर बताया कि प्रत्येक नागरिक को आधा पैसा मिलता है।

"अच्छी बात है, इस आदमी को एक पैसा देकर भेज दो।" राजा ने कहा।

पूड़ियों का कानून

एक बार गोलकोंडा का नवाब शिकार खेलने गया। एक हिरण का पीछा करते घने जंगल में जा पहुँचा। उसका परिवार नवाब के घोड़े के साथ चल न पाया, पीछे रह गया।

दुपहर हो गयी। नवाब को बड़ी प्यास लगी, पर बहुत ढूँढ़ने पर भी कहीं पानी दिखाई न दिया। थके हुए घोड़े पर आगे बढ़ते नवाब ने मन में सोचा–"अल्लाह, क्या मुझे आज प्यास के मारे मरना ही पड़ेगा?"

इतने में उसे दूर पर पक्षी उड़ते दिखाई दिये। नवाब ने सोचा कि वहाँ पर पानी होगा, इसलिए अपने घोड़े को उस ओर ले गया। शीघ्र ही वह एक मंदिर के पास पहुँचा। मंदिर के पास छायादार पेड़ थे। मंदिर के सामने नारियल के पानी जैसे पानीवाला एक तड़ाग है।

नवाब की जान में जान आ गयी। वह झट घोड़े से उतर पड़ा, वह भर पेट पानी पिया, अपने घोड़े को भी पानी पिलाया और पेड़ की छाया में लेट गया। थका-मांदा होने की वजह से जल्दी उसे नींद आयी।

नींद से जागकर नवाब ने देखा, सूरज डूब गया है। पूरब से अंधेरा फैलता जा रहा है। उसने उठकर हाथ-पैर धोये, नमाज करते-करते रात हो गयी। उसे ऐसा मालूम हुआ कि उसे वह रात वहीं पर बितानी होगी। इसलिए वह मंदिर के सामनेवाले चबूतरे पर लेट गया। लेकिन भूख सता रही थी, इसलिए उसे नींद न आयी।

इतने में उसे दूर पर एक दिया दिखाई दिया। उस रोशनी को अपनी ओर बढ़ते देख उसे डर लगा। फिर भी वह कुछ

पारसमल जैन

न कर सकता था, इस वजह से वह अल्लाह की याद करते लेटा रहा।

थोड़ी देर में उस मंदिर का पुजारी दीपक के साथ वहाँ पर आ पहुँचा। नवाब की हालत जानकर मंदिर में गया। सत्तू में थोड़ा गुड़ मिलाकर नवाब को खाने के लिए दे दिया।

नवाब ने सत्तू खाकर अपनी भूख मिटाई, पुजारी को इनाम के रूप में थोड़ी-सी ज़मीन लिख कर दी, तब वहाँ से चला गया।

यह बात उस ज़मीन से सटी ज़मीनवाले अमीर को मालूम हो गयी। वह जिस ज़मीन पर क़ब्जा करना चाहता था, उसे दूसरों के हाथ जाते वह सहन न कर पाया। उसने पुजारी के पास जाकर नवाब के द्वारा लिखा दस्तावेज अपने नाम पर लिखाने पर जोर दिया।

पुजारी ने साफ़ इनकार किया।

"मैं जिस फ़सल को खाना चाहता था, उसे तुम कैसे खा सकते हो? मैं भी देख लूंगा।" यों कहते अमीर ने पुजारी को एक पेड़ से बँधवाया और अपने नौकरों से उसे खूब पिटवाया। पुजारी मार सहन न कर पाया। उसने मार खाकर डरके मारे नवाब का दिया दस्तावेज लाकर अमीर को दे दिया।

अमीर ने उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिये और पुजारी के हाथ देकर उन टुकड़ों को निगलने को कहा। पुजारी ने लाचार होकर उन्हें चबाकर निगल डाला।

कुछ दिन बाद उस रास्ते से गुजरते नवाब को पुजारी की याद आई। नवाब मंदिर के पास गया। मंदिर के पास एक झोंपड़ी थी। झोंपड़ी में से पुजारी के बच्चे आकर बाहार खड़े हो गये। वे एकदम दुबले-पतले हो गये थे. उनके कपड़े फटे और मैले थे।

उन्हें देखने पर नवाब को अचरज हुआ। नवाब ने सोचा कि उसने जो ज़मीन दी, उस पर होनेवाली

आमदनी शायद पुजारी के लिए पर्याप्त नहीं है।

इतने में लकड़ी बीन लाने गये पुजारी को नवाब के आने की खबर मालूम हुई, वह दौड़कर नवाब के पास आया, नवाब की ख़ैरियत जानकर झोंपड़ी में गया। गुड़ मिलाया ग़या सत्तू लाकर नवाब को खाने के लिए दिया।

नवाब ने सत्तू खाकर उसकी तारीफ़ की और कहा–"एक काग़ज़ लेते आओ, तुम्हें एक और इनाम लिखकर देता हूँ।"

"सरकार! मेरी एक बिनती है। काग़ज़ पर लिखकर देनेवाला इनाम मुझे नहीं चाहिए।" पुजारी ने कहा।

"तो क्या तांबे के पत्र पर लिख कर दूं?" नवाब ने पूछा।

"नहीं जनाब! उसे निगलना और भी मुश्किल है। आप जो दस्तावेज़ लिखकर देना चाहते हैं, वह पूड़ियों पर लिखकर दिलाइए।" पुजारी ने शांत स्वर में उत्तर दिया।

"अरे पागल, कहीं पूड़ियों पर भी दस्तावेज लिखा जाता है! क्या दस्तावेज़ खाने के लिए होता है?" नवाब ने पूछा।

"जी हाँ, जनाब!" पुजारी ने जवाब दिया।

"अरे पगले, तुमने कैसी गलती की? उसे लेकर तुम तहशीलदार को दिखा देते तो वह ज़मीन तुम्हारे क़ब्जे में करवा देते! तो क्या मैंने तुम्हें जो ज़मीन दी, वह तुम्हारे क़ब्जे में नहीं आई?" नवाब ने फिर पूछा।

पुजारी ने सारी बातें नवाब को सुनाईं।

सारी कहानी सुनने के बाद नवाब नाराज़ हो गया। अमीर को बुलवाकर कोड़ों से पिटवाया, उसने पुजारी को जो ज़मीन दी थी, उसे पुजारी के क़ब्ज़े में करने को ताक़ीद लिखकर तहशीलदार के पास भेजा।

इस तरह पुजारी को वह इनाम फिर से मिल गया। इसके बाद वह अपने परिवार के साथ आराम से अपने दिन बिताने लगा।

प्रसन्नांजनेयम्

एक छोटे से देहात में एक गरीब परिवार था। कठपुतली का खेल दिखाना उस परिवार का पेशा था। उससे जो आमदनी होती, उसी से सारे परिवार का पेट भरना पड़ता था। उस परिवार में पति-पत्नी, दो बूढ़े और चार बच्चे थे। दस दिन में एक बार किसी गाँव में जाकर पुतली का खेल दिखाते, तभी जाकर उन सब को खाना मिल जाता था।

एक बार वह परिवार सारे सामान लेकर कठपुतली का खेल दिखाने किसी गाँव के लिए चल पड़ा। सारे सामान व बोरे ढोते बच्चों के साथ सफर करने में देरी हो गयी और गाँव की सीमा तक पहुँचते-पहुँचते रात हो गयी। वहाँ पर उन्हें एक तालाब तथा जटाओं वाला बरगद दिखाई दिया। उस रात को वहीं पर ठहरने का निश्चय करके खाने की पोटलियाँ खोल दीं, खाने के बाद तालाब का पानी पीकर वहीं सो गये।

आधी रात के समय आहट पाकर वे सब जाग पड़े। नज़दीक में ही उन्हें घर दिखाई दिये। उन घरों में से कुछ लोग आये और उन लोगों ने पुतली का खेल दिखाने को कहा।

"पुतली का खेल दिखाना मामूली बात थोड़े ही है? पंदाल डालना है, मशाल जलाना है, दीप जलाने हैं, पर्दे बाँधने हैं, इस आधी रात के वक़्त ये सब काम कैसे हो सकते हैं? इसलिए अभी हम खेल नहीं दिखा सकते।" उस परिवार के लोगों ने बताया।

"तुम लोग जो सुविधाएँ चाहते हों, वे सब हम करेंगे। तुम्हें आज रात को खेल दिखाना ही होगा।" सब लोगों ने ज़ोर दिया।

जगदीश बलदेव

फिर क्या था, कुछ ही क्षणों में सब ने मिलकर सारे इंतजाम कर डाले। पंदाल तैयार हो गया। पुतली का खेल शुरू हुआ। बूढ़ी ने प्रेक्षकों के सामने एक वस्त्र बिछाया, ताकि उस पर प्रेक्षक अपनी इच्छा के अनुसार रुपये-पैसे डाल दे।

पुतली खेल दिखाने वाले गीत गा रहे हैं, डफली बजा रहे हैं, चिल्ला रहे हैं, पर्दे पर पुतलियाँ खेल दिखा रही हैं। दृश्य था लंकापुरी में रावण का दरबार; राक्षस हो-हल्ला मचा रहे हैं, राक्षसी स्त्रियाँ नाच रही हैं। प्रेक्षक उत्साह के साथ पुतली खेल देखते चिल्ला रहे हैं, खेल मजेदार बन पड़ा है।

रावण के दरबार का दृश्य समाप्त हो गया। पर्दे पर लंकिणी आ गयी। लंकिणी का वध करने आंजनेय (हनुमान) आ पहुँचा। आंजनेय के वीरावेश तथा लंकिणी की परेशानी के साथ सारा प्रदेश गूँज उठा। पर्दे के पीछे कोलाहल मच गया। पर्दे के आगे कोलाहल बंद हो गया।

बूढ़ी ने पर्दे के आगे आकर देखा, सारा मैदान खाली पड़ा था। प्रेक्षक सब गायब हो चुके थे। बूढ़ी ने जो कपड़ा बिछाया था, उस पर काफी पैसे गिराये गये थे। बूढ़ी ने पीछे जाकर खेल रुकवा दिया।

तब पुतली के खेलवालों ने आकर देखा, तो पहले जो घर दिखाई दिये वे न थे। जिन लोगों ने उनसे खेल दिखाने को कहा था, वे लोग तथा खेल देखने आये हुए लोगों में से भी एक भी आदमी वहाँ न था। पुतली खेल के खिलाड़ियों ने तब जान लिया कि अब तक खेल देखनेवाले भूत थे। आंजनेय के पर्दे पर आते ही भूत सब भाग गये हैं। चाहे जो भी हो, सुबह तक पर्दे पर आंजनेय को दिखाना अच्छा होगा, यह सोचकर वे आंजनेय को दिखाते रहें।

जो भी हो, उनकी मेहनत बेकार न गयी। काफी रुपयों के साथ चटाइयाँ, दीपक आदि सामग्री भी उन्हें मुफ्त में मिल गयी। भूतों के द्वारा हानि होने से आंजयेय ने उनकी रक्षा की।

जब आँखें खुलीं

एक गाँव में एक कंजूस अमीर था। पर वह बड़ा ही पेटू था। वह खुद पक्वान्न खाया करता था, मगर दूसरों को वह अपना झूठा तक न देता था। उसके परिवार में उसकी बीबी और दो बच्चे भी थे। फिर भी उन्हें भरपेट खाना तक खाने न देता था। अमीर शंकरशर्मा को हमेशा खाने की बुरी लत लगी थी। इसलिए वह दिन भर कोई न कोई मिठाई या फल खाया करता था। अगर बच्चे ललचाई दृष्टि से उसकी ओर देखते तो वह यही बताता कि वह दवा खा रहा है।

शंकरशर्मा के पड़ोस में दिवाकरदास नामक एक गरीब था। उसके भी पत्नी और दो बच्चे थे। वह जो भी कमाता था, पत्नी और बच्चे सब बराबर खाते।

एक दिन दिवाकर का लड़का शंकरशर्मा के घर गया। उस वक़्त शंकरशर्मा बरामदे में बैठे संतरे खा रहा था। शंकरशर्मा के दोनों बच्चे अपने बाप की ओर ललचाई नज़र से देख रहे थे।

शंकरशर्मा की दृष्टि दिवाकर के लड़के पर पड़ी। उसने खीझकर दिवाकर के लड़के से पूछा—"क्यों बे, इधर क्यों आये हो, क्या बात है?"

"चंदन और लक्ष्मी को खेलने के लिए बुला ले जाने आया हूँ।" दिवाकर के लड़के ने विनयपूर्वक जवाब दिया।

"जाओ, पड़ोस में जाकर खेल लो।" शंकरशर्मा ने अपने बच्चों से कहा।

चंदन और लक्ष्मी दिवाकर के लड़के के साथ खेलने चले गये। जब वे दिवाकर के घर पहुँचे तब दिवाकर के लड़के ने शंकरशर्मा के लड़के से पूछा—"अरे चंदन, तुम्हारे बाप तुम लोगों को दिये बिना सारे संतरे खुद खा रहे हैं, ऐसा क्यों?"

जयप्रकाश बंसल

"वे रोज़ ऐसा ही करते हैं।" दोनों बच्चों ने एक स्वर में जवाब दिया।

दिवाकर का लड़का उठ खड़ा हुआ और बोला–"तुम दोनों यहीं रहो, मैं अभी आता हूँ।" यों कहकर वह वैद्य रंगनाथ के घर की ओर दौड़ पड़ा।

दिवाकर का लड़का जब वैद्य के घर पहुँचा, तब वैद्य रंगनाथ घर पर ही था। लड़के ने वैद्य को नमस्कार करके कहा–"वैद्यजी, हमारे पड़ोसी शंकरशर्मा बहुत बीमार हैं। वे रुपयों के लोभ में पड़कर इलाज नहीं करवा रहे हैं, आप उन्हें बचाइए।"

सच्ची बात यह है कि रंगनाथ किसी की भी बीमारी कीं बात सुनता तो उसे नींद नहीं आती। दिवाकर के लड़के के मुंह से यह बात सुनते ही वह उठ खड़ा हुआ, दवाइयों की थैली लेकर शंकरशर्मा के घर की ओर चल पड़ा।

रंगनाथ जब शंकरशर्मा के घर पहुँचा, तब वह बरामदे में कुर्सी पर बैठा हुआ था। रंगनाथ को देख शंकरशर्मा अचरज में आ गया और उठकर पूछा–"क्या बात है, आप इधर पधारे?"

रंगनाथ ने हँसकर जवाब दिया–"आप ही के वास्ते आया हूँ। सुना है कि आपकी तबीयत ठीक नहीं है!"

"मेरी तबीयत तो बिल्कुल ठीक है, आप देख ही रहे हैं कि मैं कैसा स्वस्थ हूँ?" शंकरशर्मा ने कहा।
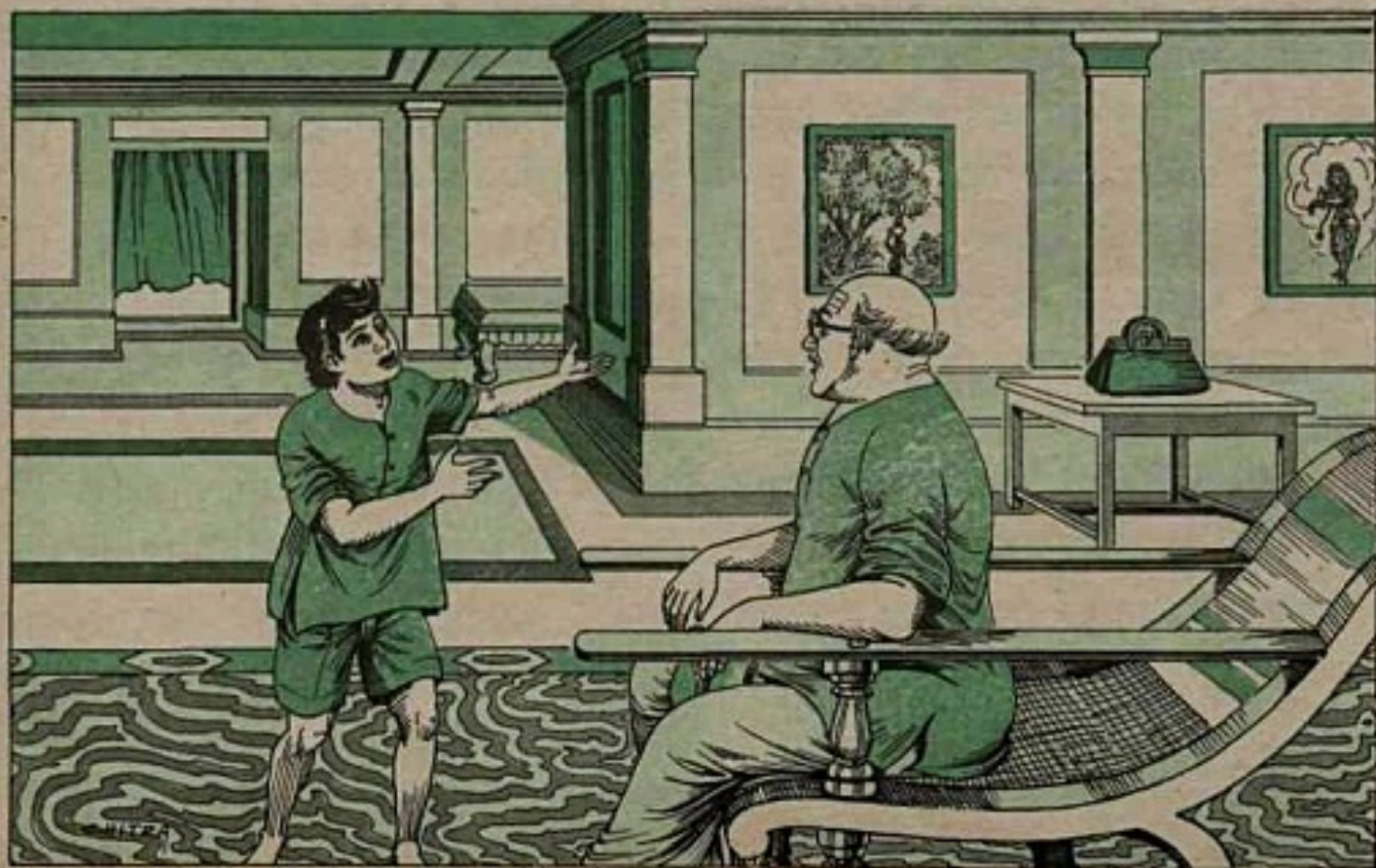
"ऐसा न कहिए, आप घबराइए नहीं, मैं आपका इलाज़ मुफ़्त में करूँगा।" रंगनाथ ने समझाया।

शंकरशर्मा ने हँसकर कहा—"आप यह कैसी बात कह रहे हैं? आप के द्वारा इलाज़ कराकर रुपये देने की हिम्मत मुझमें कहाँ? लेकिन वास्तव में मुझे कोई बीमारी नहीं है, फिर भी यह बताइए कि आप से किसने कहा कि मैं बीमार हूँ?"

रंगनाथ ने खीझकर कहा—"आप के पड़ोसी दिवाकर के लड़के ने बताया है।"

शंकरशर्मा को बड़ा गुस्सा आया। उसी वक़्त पड़ोस में जाकर दिवाकर के लड़के को बुला लाया। उसके साथ शंकरशर्मा के बच्चे भी आ पहुँचे।

रंगनाथ ने दिवाकर के लड़के की ओर क्रोध भरी दृष्टि से देख पूछा—"अरे, तुमने बताया कि शंकरशर्मा बीमार हैं, ये तो बिलकुल चंगे हैं?"

दिवाकर के लड़के ने इतमीनान से जवाब दिया—"ये अपने बच्चों को दिये बिना संतरे खा रहे थे। मेरे पिताजी हमें खिलाए बिना कोई भी चीज नहीं खाते। लेकिन वे जब बीमार पड़ते हैं, तब अकेले खाते हैं। क्योंकि ज्यादा खरीदने के लिए हमारे पास पैसे नहीं हैं।"

"तो क्या बच्चों को दिये बिना खाता हूँ, तो तुम मुझे बीमार बताते हो? अगर मैं बीमार हो जाता तो क्या मैं वैद्यजी को नहीं बुलवा सकता हूँ?" क्रोध

में आकर शंकरशर्मा ने दिवाकर के लड़के से पूछा।

"मैंने सोचा, आप कंजूस हैं, इसीलिए इलाज नहीं करा रहे हैं! उसने सोचा कि शायद आप नहीं जानते कि रंगनाथजी मुफ़्त में इलाज करते हैं। इसीलिए वैद्यजी के घर की ओर यह दौड़ गया था, पिताजी!" शंकरशर्मा के लड़के चंदन ने कहा।

यह बात सुनने पर शंकरशर्मा को बड़ा गुस्सा आया। उसने दिवाकर के लडके से पूछा–"क्यों बे, तुमको मालूम हो गया कि मैं कंजूस हूँ। इसीलिए मैं अपने बच्चों को खिलाये बिना खुद खाता हूँ, यह बात तुम क्यों समझ नहीं पाये?"

"मेरे पिताजी जब बीमार पड़ते हैं, तब वे हमें दिये बिना फल खुद खाते हैं। उस वक़्त वे आँखों में आँसू भरकर कहते हैं–'चाहे बड़े से बड़ा कंजूस भी क्यों न हो, अपने बच्चों को खिलाए बिना खुद नहीं खाता, लेकिन मैं तुम्हें दिये बिना खाता हूँ। इस बात का मुझे दुख है, पर लाचारी है।' इसलिए मैंने सोचा कि आप बीमार पड़ गये हैं।" दिवाकर के लड़के ने शांतिपूर्ण स्वर में उत्तर दिया।

शंकरशर्मा ये बातें सुनते ही चौंक पड़ा। इसके बाद अपने को संभालकर दिवाकर के लड़के के कंधे पर थपथपाया। तब रंगनाथ से बोला–"रंगनाथजी, इसका कहना सच है, मैं बहुत दिनों से बीमारी से परेशान हूँ। इसीलिए मैं अपनी पत्नी और बच्चों को सुख नहीं दे सका। अच्छा हुआ कि यह लड़का आप को मेरे घर बुला लाया।"

उस दिन रात को शंकरशर्मा ने रंगनाथ के परिवार तथा दिवाकर के परिवार को भी निमंत्रण देकर अपने घर बढ़िया दावत दी। शंकरशर्मा के बच्चों ने पहली बार अच्छे मिष्टान्नों का स्वाद देखा। इसके बाद फिर वे बच्चे कभी खाने की चीज़ों के वास्ते नहीं ललचाये!

अक्ल का दीवाना

एक गाँव में दीवाना नामक एक मंदबुद्धि वाला था। उसे लोग "कमबख्त दीवाना!" कहते थे। उसे लगा कि अक्ल पाने का कोई मार्ग हो तो अच्छा होगा!

एक दिन उसने एक मछुए से पूछा–"अक्ल पाने के लिए क्या करना चाहिए?" मछुए ने समझाया–"तुम रोज एक मछली का मगज़ पकाकर खाते जाओ।"

दीवाना रोज उसी मछुए से एक रुपया देकर मछली का सिर ख़रीद ले जाता था। मछुए बाक़ी मछली को एक रुपये में बेचकर नफ़ा उठाता था। इस तरह एक महीना बीत गया। एक दिन दीवाना ने मछुए के पास जाकर पूछा–"पूरी मछली का दाम अगर एक रुपया हो तो तुम सिर्फ़ सिर के लिए मुझ से एक रुपया क्यों लेते हो? यह अन्याय है!"

मछुए ने हँसकर कहा–"देखते हो न? तुम्हें अक्ल आ गयी है।" दीवाना संतुष्ट होकर अपने घर चला गया।

चोर पकड़ा गया

सुबल एक गाँव के धनी परिवार का लड़का था। वह नजदीक के शहर में अपने मामा इंद्रलाल के घर रहते पढ़ता था। इंद्रलाल जादू की विद्याएँ अच्छी तरह से जानता था। सुबल की उम्र पंद्रह साल की थी।

सुबल अकसर छुट्टियों में अपने गाँव आया करता था, फिर स्कूल के खुलते ही शहर जाया करता था। एक बार वह गर्मी की छुट्टियों में अपने गाँव पहुँचा, तो देखता क्या है, सारे गाँव में बड़ी चहल-पहल मची हुई है।

"आज हमारे गाँव में क्या हो रहा है? तुम सब क्यों इस तरह बहुत व्यस्त मालूम होते हो?" सुबल ने अपने मित्र सुशील से पूछा।

"तुम नहीं जानते? हमारे गाँव में एक महा पुरुष आये हुए हैं। वह साक्षात् देवता के समान हैं। हम लोग जो चाहे सो उसी वक़्त करके दिखा सकते हैं! वे पानी पर चलते हैं, आग पर चलते हैं। और न मालूम क्या-क्या करते हैं?" सुशील ने जोश में आकर कहा।

"क्या तुम ने ये सब अद्भुत कार्य देखे हैं?" सुबल ने पूछा।

"नहीं, लेकिन सब लोग बताते हैं। लेकिन मैंने एक अद्भुत को अपनी आँखों से खुद देखा है।" सुशील ने जवाब दिया।

"वह क्या है?" सुबल ने कुतूहल में आकर पूछा।

"वे खड़ाऊ पैरों में लगाकर चलते हैं। उन खड़ाऊओं में पैर घुसेड़नेवाली पट्टी या उंगलियों से पकड़नेवाला आधार भी नहीं होता। बस, वे तड़ाक से चलते जाते हैं।" सुशील ने कहा।

ए. सी. सरकार. जादूगर

सुबल के मन में उसी वक़्त उस महा पुरुष को देखने की तीव्र इच्छा हुई, लेकिन सफर की थकावट के कारण अपने इस प्रयत्न को त्याग कर वह सीधे घर चला गया। उस दिन रात को खाना खाते समय सुबल ने अपनी माँ से पूछा–"माँ, सुनते हैं कि हमारे गाँव में कोई बड़ा आदमी आया हुआ है, क्या तुमने उसको देखा?"

सुबल की माँ ने हाथ जोड़कर ललाट पर रखते हुए कहा–"क्या तुम घटानंद स्वामीजी के बारे में पूछते हो? उनके बारे में ऐसे हल्के शब्द अपने मुँह से मत निकालो। बेटा, वे कोई मामूली आदमी नहीं, महाँ पुरुष हैं।"

"उन्होंने कौन बड़े काम किये हैं जिस से हम उनको महा पुरुष माने?" सुबल ने फिर पूछा।

"अरे बेटा, बाक़ी लोगों की बात मैं नहीं जानती, स्वामीजी की दवा अमृत समझो! अमृत! उन्होंने मंत्र फूँककर तीर्थ दे दिया तो नकुल के पुत्र का बुखार तीन तीन जून में उतर गया। शंकर की लड़की को दस्त हो रहे थे, स्वामी जी ने मंत्र फूँककर तीर्थ दिया, सवेरे तक वह बिलकुल चंगी हो गयी। क्या ये मामूली बातें थीं?" माँ ने समझाया।

"मैंने सुना है कि वे खडाऊ पैरों में चिपका कर चलते हैं, क्या माँ तुमने देखा?" सुबल ने अपनी माँ से फिर पूछा।

"इस अद्भुत को हमारे गाँव के सभी लोगों ने देख लिया है। सुनते हैं कि कुछ लोगों ने उन्हें पानी और आग पर चलते भी देख लिया है। कल सुबह ही सुबह तुम उनके पास जाकर प्रणाम करो और उनका आशीर्वाद ले लो, बेटा।" सुबल की माँ ने समझाया।

सुबल ने जैसे-तैसे वह रात बिताई। दूसरे दिन सवेरे सुशील, विष्णु, नटवर, तथा अन्य मित्रों को भी साथ ले गाँव के
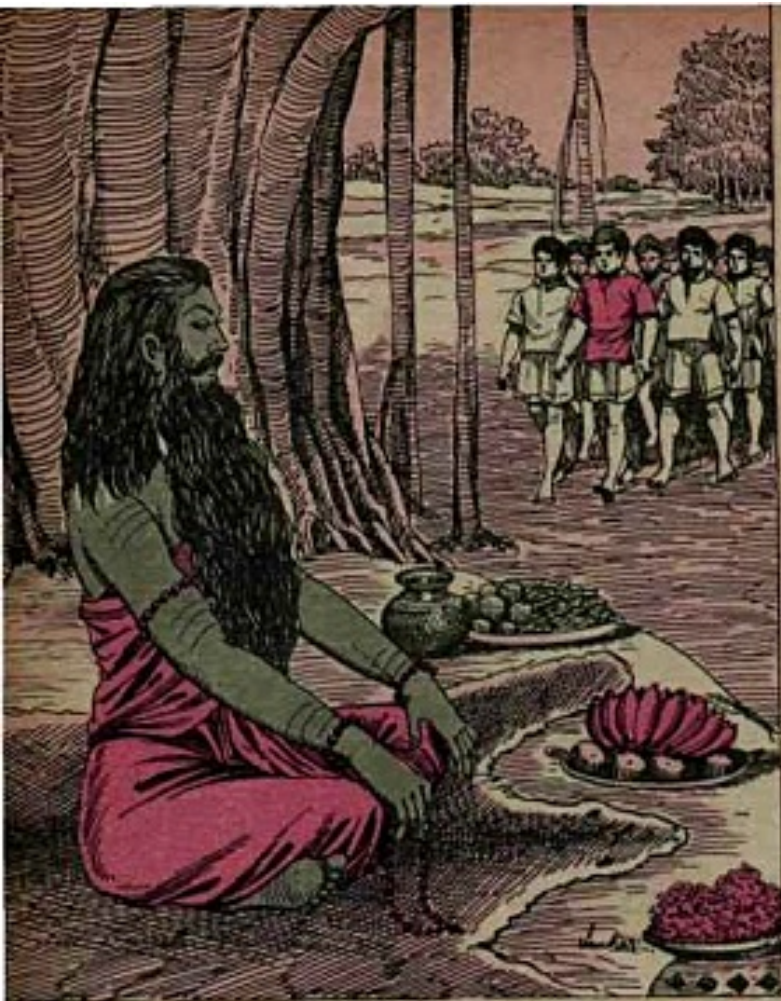
छोर पर बरगद के नीचे स्थित उजड़े मकान में पहुँचा।

पेड़ के नीचे एक अलाव के सामने हिरण के चमड़े पर स्वामीजी बैठे हुए थे। वे आँखें मूँदें ध्यान में मग्न थे। वे काले, स्वस्थ और मजबूत थे। जटाओं से भरे उनके केश लंबे थे। उनकी दाढ़ी नाभि तक फैली हुई थी। उनके दो दाढ़ीवाले अनुचर स्वामीजी के वास्ते गांजा तैयार कर रहे थे।

थोड़ी देर बाद स्वामीजी आँखें मूँदे मूँदे उच्च स्वर में "हर हर! भम्, भम्! शिवशंभो! शिवशंभो!" चिल्ला उठे। फिर धीरे से नेत्र खोलकर लड़कों को देखा। मदहास करके उन्हें निकट आने का संकेत किया। डरते-डरते लड़के उनके निकट पहुँचे।

"लड़के, मुझे देख क्यों डरते हो? मेरे निकट आओ, ये फल लेते जाओ।" यों कहते स्वामीजी ने फलो की ओर सकेत किया।

वैसे सुबल डरन के स्वभाव का न था, फिर भी वहाँ के वातावरण को देख वह घबरा गया और एक एक क़दम आगे बढ़ाते स्वामीजी के पास पहुँचा। उसके पीछे बाक़ी लड़के भी गये। स्वामीजी ने उन सब को अपने हाथ से प्रेमपूर्वक फल व मिठाइयाँ दीं। तब बोले—"तुम लोग शाम को फिर आ जाओ, तुम्हें फल और मिठाइयां दूंगा।"

लडके स्वामीजी को प्रणाम करके बाहर आ गये। स्वभाव से ही सुबल संदेहशील था, लेकिन इस घटना के बाद स्वामीजी पर उसका थोड़ा सा विश्वास जम गया। साथ ही उनकी महिमाओं को देखने की लालसा भी उसके मन में पैदा हो गई।

उस दिन शाम को लड़कों का दल जब स्वामीजी को देखने गया, तब तक वहाँ बड़ी भीड़ लगी थी। कई लोग स्वामीजी के वास्ते फल, मिठाई, दूध, चावल, फूल व मालाएं ले आये हैं।

धीरे धीरे शाम हो गयी। स्वामीजी की पूजा का समय हो गया। स्वामीजी "हर हर शंभो!" चिल्ला कर उठ खड़े हुए, तभी उनके दो अनुचर स्वामीजी के पास आये।

"हाथ-पैर धोना है। गंगा जल कहाँ?" स्वामीजी ने अपने अनुचरों से पूछा।

"गंगा जल तैयार है। आप अपने हाथ-पैर धो सकते हैं।" एक अनुचर ने जवाब दिया।

स्वामीजी एक पीढ़े पर बैठ गये। एक अनुचर घड़े से गंगा जल पैरों पर डाल रहा था, स्वामीजी ने हाथ-पैर धोये। दूसरा अनुचर बिना पट्टीवाले खड़ाऊ लाया और उनके सामने रखा। स्वामीजी ने उन पर अपने पैर टिका कर एक मिनट के लिए आँखें मूंद लीं। कोई मंत्र पढ़ा, चार क़दम चलकर अपने स्थान तक वापस पहुँचे।

"घटानंद स्वामीजी की जय!" जनता चिल्ला उठी।

इसे देख सुबल का दिमाग चकरा गया। किसी अद्भुत शक्ति के बिना ऐसा काम करना किसी के लिए संभव नही। स्वामीजी ने अपने पैर साफ़ धो लिये है। इसलिए उन पर संदेह करने की कोई गुंजाइश नहीं है। यह तो कोई योग की शक्ति हो सकती है। इसमें कोई शक नहीं है। उसका मामा इससे बडे अद्भुत दिखाते हैं। मगर वह सब जादू और

धोखा है। उसका मामा जो अद्भुत कार्य करते हैं, उनमें अधिकांश का मर्म सुबल जानता है। लेकिन क्या उसका मामा इस तरह लकड़ी के खड़ाऊँ पैरों में पहन कर चल सकता है? कभी नहीं!"

सुबल ने घर लौटकर अपने मामा को स्वामीजी के अद्भुत कार्यों का विवरण पत्र में लिखा। ऐसे महात्मा को अपने गाँव में देखना सुबल के लिए गर्व का कारण था। सुबल के मामा ने बड़े चाव से उस पत्र को पढ़ा और कोई चिट लिखकर अपने मित्र के पास भेजा।

दूसरे दिन इतवार था। अचानक जादूगर इंद्रलाल अपने तीन मित्रों को साथ ले सुबल के घर आ धमका। उनके साथ आये हुए तीनों व्यक्ति बहुत ही मजबूत और आजानुबाहु थे।

अपने मामा को देख सुबल अचरज में आ गया। इस पर इंद्रलाल ने उसे समझाया—"सुबल, तुम्हारी चिट्ठी देखने के बाद यहाँ आने की मेरी इच्छा हुई, बस, चला आया।" सुबल ने इस पर अपनी खुशी प्रकट की कि स्वामीजी ने अपने मामा को भी आकृष्ट किया है।

"तुम्हारे स्वामीजी और कई अद्भुत दिखाने जा रहे हैं। इंद्रलाल के साथ आये हुए लोगों में से एक ने कहा।

"आप को कैसे मालूम?" सुबल ने उस व्यक्ति से पूछा।

"हमने जो कुछ जाना और सुना, वह अगर झूठ न हो तो घटानंद स्वामी शीघ्र ही कुछ और अद्भुत कार्य करने जा रहे हैं। मुनीराम और प्रसाद तुम दोनों को स्वामीजी पर निगरानी रखना बहुत जरूरी है। वरना, वे पहले ही हमारे व्यूह को भाँपकर अदृश्य हो सकते हैं।" एक और व्यक्ति ने कहा।

वे दोनों व्यक्ति भिखारियों के वेष धर कर तुरंत वहाँ से चल पड़े। जो तीसरा व्यक्ति वहाँ रह गया था, उसने सुबल से

पूछा–"स्वामीजी कब प्रार्थना शुरू करने वाले हैं?"

"समय हो रहा है। उनका खड़ाऊँ पहनकर चलना देखना चाहते हैं तो तुरंत चलना होगा। चाहे तो मैं आप को वहाँ पर ले जा सकता हूँ।" सुबल ने उत्तर दिया।

सब वहाँ से चल पड़े। बरगद के निकट पहुँचने के बाद इंद्रलाल के साथ आये हुए व्यक्ति ने अपनी जेब में से एक छोटा सा फोटो निकाला, उसे परख कर, घटानंद स्वामी की ओर थोड़ी देर ध्यान से देखा, तब कहा–"इंद्रलाल, मैंने जो सोचा, बिलकुल सही है।"

जो वेष बदलकर पहले ही वहाँ पहुँच गये थे, वे लोगों के बीच मिलकर स्वामीजी तथा उनके अनुचरों के दोनों तरफ़ खड़े हो गये थे।

स्वामीजी ने हाथ-पैर धो लिये, बिना पट्टी वाले खड़ाऊँ पहनकर चलने लगे। सुबल ने अपने मामा का हाथ पकड़कर चिल्ला कर कहा–"देखो, मामाजी! कैसा अद्‌भुत है!"

"देखो सुबल, ठीक से देखो! खड़ाऊँ इस तरह पैरों से चिपक गये हैं, जैसे उनपर गोंद चिपकाई गयी हो। हाँ, हाँ, यह तो पुरानी विद्या है! खड़ाऊओं में वार्निश के बदले बबूल की गोंद चिपका देते हैं। देखो, खड़ाऊँ ऐसे लगते हैं, जैसे उन पर वार्निश पोत दिया गया हो! अच्छे क़िस्म की गोंद चिपकायी गयी होगी। भीगे पैर बबूल की गोंद से खूब चिपक जाते हैं।" इंद्रलाल ने कहा।

सुबल की समझ में सारी बात आ गयी।

इसके बाद इंद्रलाल ने सुबल को समझाया–"यह घटानंद स्वामी बहुत बड़ा अपराधी है। मेरा मित्र पुलिस इन्स्पेक्टर है। ठीक से देखो, वह और क्या क्या करने जा रहा है?"

इतने में सीटी बज उठी। भीड़ में से भिखारियों के वेष में रहनेवाले दोनों व्यक्ति

हथ कड़ियाँ लेकर स्वामीजी के सामने आये। उनका अफ़सर दोनों हाथों में दो पिस्तौल लिये स्वामीजी की ओर निशाना करके चिल्ला उठा—"हाथ उठाओ।" जनता हिल उठी। दूर से उस प्रदेश को घेर कर उस विचित्र दृश्य को देखने लगी।

"रंगाराव! तुम्हारा खेल हो चुका!" यों कहते पुलिस इन्स्पेक्टर आगे आया और स्वामीजी की दाढ़ी पकड़कर खींच दी। दाढ़ी निकलकर इसके हाथ में आ गयी। स्वामी जी का अवतार ही बदल गया।

इसके बाद इन्स्पेक्टर ने वहाँ पर इकट्ठे हुए लोगों से कहा—"दोस्तो, तुम लोगों ने एक और बड़ा अद्भुत देखा है। इस स्वामीजी का अवतार बदल गया है। इसकी असली कहानी सुन लो। यह रंगाराव नाम का एक नामी लुटेरा है, डाकू है। यह अपने दो अनुचरों के साथ जेल से धोखा देकर भाग गया है। वे दोनों यहीं पर इसके साथ हैं।"

रंगाराव कपड़े की थैली में अपना हाथ घुसेड़ने को हुआ। इसे जानकर इन्स्पेक्टर ने गरजकर कहा—"रंगाराव, तुमने अपने पिस्तौल निकालने की कोशिश की, तो तुम्हारा सिर फोड़ दिया जाएगा। अच्छे लड़कों की भाँति अपने दोनों हाथ आगे बढ़ाकर हथ-कड़ियाँ पहनवा लो।" यों कहते इन्स्पेक्टर ने रंगाराव के हाथों में हथकड़ियाँ पहना दीं।

घटानंद स्वामी की थैलियों की जाँच करने पर बंदूक़, कारतूस जैसी निषिद्ध वस्तुएँ प्राप्त हुईं। साथ ही उसकी थैलियों में बुखार, दस्त इत्यादि बीमारियों की दवाइयों वाली शीशियाँ भी मिलीं।

"ओह, स्वामीजी बीमारियों का इन शीशियों की दवाइयों से इलाज करते हैं। ये दवाइयाँ पानी में मिलाकर मंत्र जल के नाम से रोगियों को देते हैं। माताजी से ये सारी बातें अभी बतानी हैं।" यों सोचते सुबल अपने घर की ओर दौड़ पड़ा।

निंदा - स्तुति

एक बार एक राजा के पास पड़ोसी देश से तीन बहनें आयीं, तीनों ने क्रमशः गीत, नृत्य और संगीत में अपनी प्रतिभा प्रदर्शित की। राजा ने न उनकी प्रशंसा की और न उन्हें पुरस्कार ही दिया, बल्कि दो दिन तक अपने अतिथि गृह में रहने का अनुरोध किया। अतिथिगृह में सब लोग राजा के गुप्तचर ही थे।

अतिथि गृह में जाते ही तीनों बहनों ने राजा की तीन प्रकार से निंदा की। बड़ी बहन ने कहा–"यह राजा जलती लकड़ी है।" मंझली ने कहा–"नहीं, कांटों की गठरी है।" छोटी ने कहा–"यह भी नहीं, पत्थर का टुकड़ा है।"

ये बातें राजा के कानों में पड़ीं। राजा ने उन्हें दूसरे दिन दरबार में बुलाकर पूछा–"कल तुम लोगों ने मेरे बारे में क्या कहा?" "महाराज, मैंने आपको जलती लकड़ी बताया। मेरा मतलब था कि जलती लकड़ी रसोई बनाती है। उसके ठण्डा होने पर रसोई खाई जा सकती है। जल्दबाजी उचित नहीं है।" बड़ी बहन ने उत्तर दिया।

"महाराज, मैं इसे न मान सकती थी। इसलिए आप को मैंने कांटों की गठरी बताया। याने खटहल जैसे हैं आप! मेरा मतलब था, कांटे निकाल कर सहनशीलता से पांखें निकाल कर खाना चाहिए। यही मैंने कहा।" मझली ने समझाया।

"महाराज, यह भी ठीक नहीं, खटहल थोड़े समय तक ही सड़े बिना रह सकता है। मिस्त्री बहुत समय तक रह सकती है। देखने में पत्थर जैसे दिखाई देने पर भी मुँह में डालने पर मीठी होती है। इसलिए मैंने आप को पत्थर का टुकड़ा बताया।" छोटी ने व्याख्या की। राजा ने उनकी समयस्फूर्ति पर प्रसन्न हो उन्हें पुरस्कार देकर भेज दिया।

धारानगर के पंडित

धारानगर के राजा भोज महाकवियों का पोषण करते पंडितों की गोष्ठियों में अपना समय बिताते यशस्वी बने हैं और कालिदास उनके दरबारी कवि हैं। ये सारी बातें कातिकवि ने सुनीं, तो वह ईर्ष्या से भर उठा। कालिदास को हराकर वह स्थान प्राप्त करने के ख्याल से वह धारानगर चला आया।

धारानगर की सीमा पर पहुँचते ही उसे एक कन्या दिखाई दी। कांति कवि ने उससे पूछा—"तुम किस की लड़की हो?" उसने यों जवाब दिया :

"हर हर स्मरते नित्यम्, बहु जीव प्रपालक :
अरण्य वसते नित्यम्, तस्याहम् कुल बालिका।"

(सदा अरण्यों में रहते, हर हर जपते, असंख्य प्राणियों का पालन करनेवाले वंश की—कृषक—कन्या हूँ, यही इसका अर्थ है।)

कांतिकवि यह जवाब सुनकर आश्चर्य में आ गया। थोड़ी दूर पर कुछ स्त्रियाँ पानी भरते दिखाई दीं। एक से कांति कवि ने पूछा—"बेटी, तुम कौन हो?" इस पर उसने उत्तर दिया :

"चतुर्मुखो न च ब्रह्मा, वृषारूढो न शकर:,
अकाले वर्षते मेघ:, तस्याहम् कुल बालिका।"

(चार मुखों के होने मात्र से ब्रह्मा नहीं, बैल पर सवार होने से शिवजी नहीं, अकाल में भी वर्षा देनेवाला मेघ, ऐसे वंश की हूँ। याने पानी लानेवाली जाति की कन्या हूँ। चार मुखोंवाले चमड़े के थैले को बैल पर लाद ले जाकर पानी लाती हूँ और सब को पहुँचा देती हूँ।)

गुलशन कुमार बजाज

यह जवाब सुनकर कांति कवि और आश्चर्य में आ गया। एक और नारी से पूछा—"तुम कौन हो?" उसने कहा :

"पंच भर्ता न पांचाली, द्विजिह्वा न च सर्पिणी,
वानरी न च कृष्णास्या, तस्याहम् कुल बालिका।"

(इसका अर्थ है—वह लेखक की पुत्री है। लेखक पाँच उंगलियों से, फटी निब वाली क़लम से स्याही में डुबोकर, क़लम के चेहरे को काला करके लिखता है। इसका भार ढोने के लिए पाँचों के होते हुए भी क़लम द्रौपदी नहीं, दो जिह्वाओं के होते हुए भी निब सांप नहीं, मुख के काला होने पर भी क़लम बंदर नहीं।)

कांतिकवि यह बात सुनकर और प्रसन्न हुआ। उसने एक और स्त्री से पूछा—"तुम कौन हो?" इस पर उसने कहा :

"नित्यम् जुहोति द्रव्याणि, चौर्यकारी दिने दिने,
शत्रुम् मित्रम् न जानाति, तस्याहम् कुल बालिका।"

(हमेशा पदार्थ का होम करते शत्रु व मित्र का ख्याल किये बिना रोज़—सोना—चुराने वाली जाति की कन्या हूँ। याने सुनार की लड़की हूँ।)

कांतिकवि का आश्चर्य और बढ़ गया।

उसने एक और नारी से पूछा—"तुम कौन हो?" उसने कहा—

"बाहु रस्ति, शिरो नास्ति, न संत्यम् गुळिका दश,
तस्योत्पत्तिकरो यस्तु, तस्याहम् कुल बालिका।"

(हाथों के होते हुए भी सिर या दस उंगलियों से विहीन हूँ—कुर्ता बनाने वालों की कन्या हूँ, याने दर्जी की लड़की हूँ।)

तब कांतिकवि यह सोचते आगे बढ़ा—"इस धारा नगर में निम्न जातिवाली नारियों में ही ऐसा चातुर्य हो तो अब पुरुषों की क्या बात है? कालिदास कैसा पंडित होगा?" यह सोचते थोड़ी दूर

आगे बढ़ा तो एक स्त्री दिखाई दी । उससे पूछा–"तुम कौन हो?" उसने कहा :

"निर्जीवो जीवितो वापि श्वासोच्छ्वास विशेषतः,
कुटुंब कलहो नास्ति, तस्याहम् कुल बालिका ।"

(प्राण के न होते हुए भी साँस लेती है, पारिवारिक कलह नहीं होता, ऐसी जाति–लुहार की लड़की हूँ। लुहार धौंकनी चलाते काम करता है ।)

कांतिकवि अपने कानों पर विश्वास न कर पाया, चकित हो वह आगे बढ़ा तो एक और स्त्री को देख पूछा–"तुम बताओ, कौन हो?" उसने उत्तर दिया :

"द्विराजा, नगरी एका, नित्यम् युद्धं च जायते,
त दुत्पत्ति करो यस्तु, तन्याहम् कुल बालिका ।"

(एक ही नगर के दो राजा हैं। वे दोनों सदा कलह करते हैं। उसे तैयार करनेवाली जाति की कन्या हूँ। नगर के माने कपास के बीज निकालने का यंत्र, राजा के माने धुरियाँ, वे एक दूसरे पर घर्षण करती हैं, उसे बनानेवाला बढ़ई है। याने बढ़ई की लड़की है ।)

इतने में एक स्त्री उधर से आ निकली। उससे भी कवि ने पूछा–"बताओ तो, तुम कौन हो?" उसने कहा :

"चक्रैकम् न रथी सूर्यो, भूमौ तिष्टति सारथिः,
अगस्त्यतात निर्माण स्तस्याहम् कुल बालिका ।"

(याने एक ही चक्र है, पर रथिक सूर्य नहीं, सारथी पृथ्वी पर बैठता है। अगस्त्य के पिता को पैदा करता है। ऐसे वंश की कन्या हूँ। याने घड़े बचनेवाले कुम्हार की कन्या हूँ। अगस्त्य कुंभ में पैदा हुए हैं और सूर्य के रथ के एक ही पहिया है।)

धारा नगर की नारियों की बुद्धिमत्ता पर विस्मित हो कांतिकवि ने कालिदास को पराजित करने का विचार त्याग दिया और अपने घर वापस चला गया ।
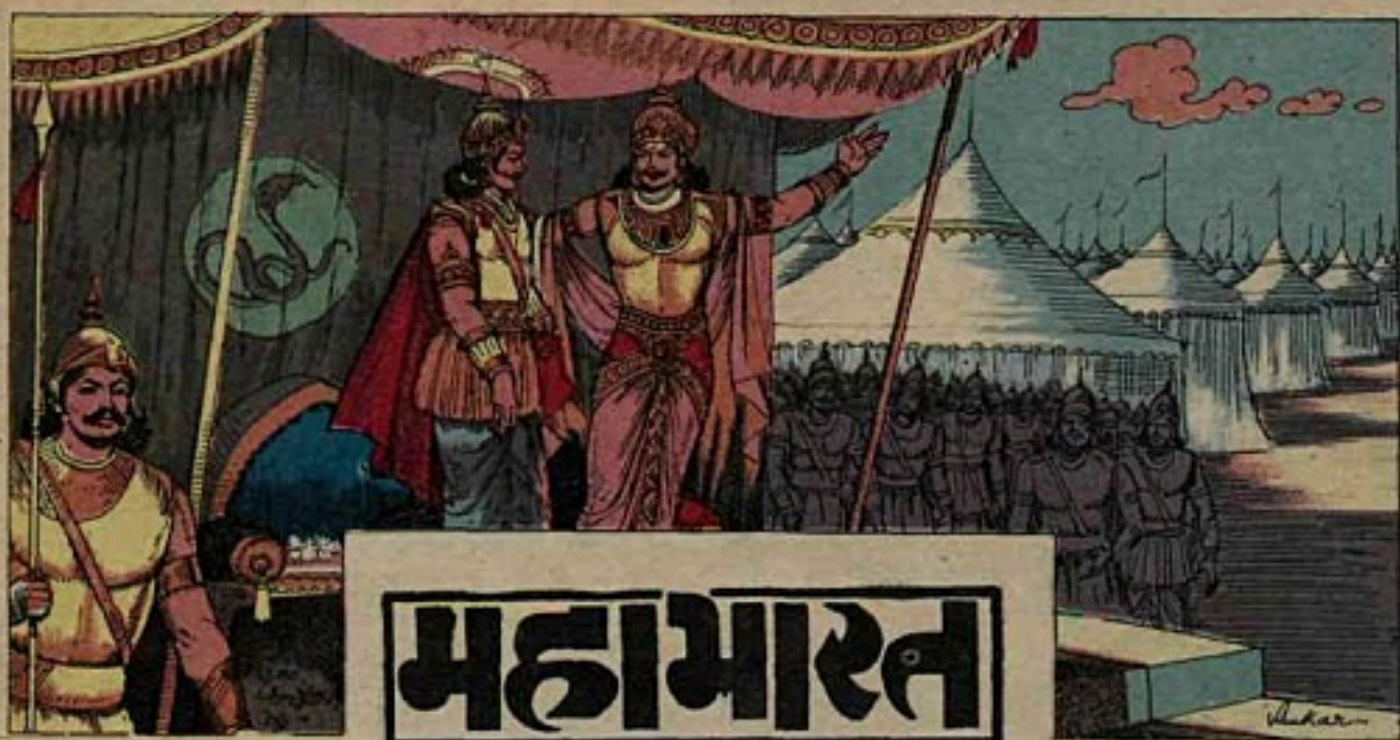
दस दिन युद्ध करके युद्ध क्षेत्र में भीष्म पितामह धराशायी हो गये। वे शिखण्डी के साथ युद्ध नहीं करते। इसलिए अर्जुन ने शिखण्डी को आगे रखकर पीछे से बाणों की वर्षा करते हुए भीष्म को गिराया।

भीष्म पितामह गिर तो गये, मगर तुरंत मरे नहीं। उनके शरीर भर में बाण चुभे थे। इसलिए जब वे गिरे तब उनका शरीर ज़मीन को छुआ नहीं। उस हालत में उन्हें प्यास लगी, तब अर्जुन ने बाण का प्रहार करके पातालगंगा को ऊपर ला दिया। उत्तरायण के आगमन तक भीष्म पितामह अंपशय्या पर अपनी इच्छा से जीवित पड़े रहे।

भीष्म के उपरांत द्रोणाचार्य ने कौरव सेनाओं का सर्व सेनापतित्व ग्रहण किया और उन्होंने पांच दिन तक युद्ध किया। उन्होंने पद्मव्यूह की रचना की, उसमें प्रवेश करके अर्जुन का पुत्र अभिमन्यु शत्रु योद्धाओं के हाथों में मर गया। उस वक़्त अर्जुन दूर पर किसी दूसरे युद्धक्षेत्र में लड़ रहा था। अभिमन्यु के पीछे शेष पांडव पद्मव्यूह में घुसने को हुए, किंतु सैंधव (जयद्रथ) ने उन्हें रोका। इस कारण अभिमन्यु की कोई सहायता नहीं कर पाया।

यह समाचार सुनने पर अर्जुन ने प्रतिज्ञा की कि दूसरे दिन वह जयद्रथ का वध करेगा। अर्जुन ने दूसरे दिन जयद्रथ का वध किया भी। इसके बाद द्रोण और

धृष्टद्युम्न के बीच घोर युद्ध चल रहा था, तब युधिष्ठिर के मुंह से यह झूठा समाचार निकला कि अश्वत्थामा की मृत्यु हो गयी है। युधिष्ठिर के मुंह से यह बात सुनकर द्रोण ने अस्त्र सन्यास किया, तब धृष्टद्युम्न ने उसका वध किया।

द्रोण की मृत्यु के उपरांत कर्ण ने कौरव सेनाओं का सेनापतित्व ग्रहण किया। कर्ण ने दुर्योधन से चाहा कि शल्य को उसका सारथी बनावे। शल्य ने कर्ण का सारथी बनना स्वीकार किया। कर्ण ने दो दिन तक युद्ध किया, इन दोनों दिन शल्य कर्ण का अपमान करते उसे हतोत्साह करता रहा। दूसरे दिन कर्ण अर्जुन के साथ युद्ध कर रहा था तब उसके रथा का पहिया कीचड़ में धंस गया। कर्ण उसे ऊपर उठा रहा था, तभी अर्जुन ने उसे मार डाला।

कर्ण के उपरांत शल्य कौरव सेना का सेनापति बना। वह उसी दिन युधिष्ठिर के साथ युद्ध करते मर गया।

अट्ठारवें दिन युद्ध समाप्त हो गया। उस युद्ध में अट्ठारह अक्षौहिणियों की सेना मर गयी। दुर्योधन को छोड़ उसके सभी भाई युद्ध में मारे गये। दुश्शासन का भीम ने बुरी तरह से वध किया और सबके देखते उसका खून पी गया।

इस युद्ध में दोनों दलों के अनेक हज़ार योद्धा काम आये। पांडवों के पक्ष में पांडव, उप पांडव, युयुत्स, सात्यकी, धृष्टद्युम्न और शिखण्डी बच रहें।

युयुत्स धृतराष्ट्र के द्वारा पैदा हुआ था। इसलिए युद्ध के समाप्त होते ही वह हस्तिनापुर चला गया।

कौरवों के पक्ष में अश्वत्थामा, कृपाचार्य, कृतवर्मा और दुर्योधन जीवित रहें। युद्ध के अंतिम समय कृपाचार्य, अश्वत्थामा और कृतवर्मा ने दुर्योधन की खोज की, पर वह कहीं दिखाई न दिया। वह अपने कंधे पर गदा लिये एक बड़े तालाब के पास पहुँचा। वह यह नहीं जानता था

कि कृतवर्मा, कृपाचार्य और अश्वत्थामा प्राणों के साथ जीवित हैं ।

तालाब के पास बैठे हुए दुर्योधन के पास संजय आ पहुँचा । दुर्योधन अपनी पराजय तथा अपने पक्ष के सभी योद्धाओं की मृत्यु पर दुख में डूबा हुआ था, उस वक़्त संजय को देख उसने कहा-"हमारे पक्ष के लोगों में तुम्हें छोड़ क्या और कोई नहीं बचा है? मेरे पिताजी से कहो कि में इस तालाब में प्राणों के साथ छिपा हुआ हूँ ।" यों कहते उसने तालाब में प्रवेश किया ।

संजय दुर्योधन के यहाँ से लौट रहा था, तब रास्ते में कृतवर्मा, कृपाचार्य और अश्वत्थामा ने उसे देखा और पूछा-"संजय, दुर्योधन कहाँ?"

संजय ने उन्हें वह तालाब दिखाकर बताया कि दुर्योधन जलस्तंभन करके उस तालाब में छिपा हुआ है ।

अश्वत्थामा ज़ोर से रो पड़ा और बोला-"ओह, शायद उन्हें नहीं मालूम कि हम लोग जीवित हैं । क्या हम चारों मिलकर पांडवों को पराजित नहीं कर सकते थे?" इसके बाद वे तीनों पांडवों के साथ युद्ध करने के लिए चल पड़े । मगर उनके युद्धक्षेत्र में पहुंचते-पहुंचते अंधेरा फैल गया । कौरवों के शिविरों से संबंधित नारियों को सेवक हस्तिनापुर ले जा रहे थे ।

युद्ध के समाप्त होते ही पांडव कृष्ण के साथ दुर्योधन की खोज करने लगे । दुर्योधन का भी वध करने का उनका संकल्प था । आखिर उन्हें मालूम हुआ कि दुर्योधन तालाब में छिपा हुआ है, वे सब वहाँ पर आ पहुँचे ।

युधिष्ठिर ने दुर्योधन से कहा-"तुम्हारे वंश के विनाश के बाद तुम अपने प्राण बचाने के लिए क्या तालाब में छिपे बैठे हो? यह तो अन्याय है, तुम बाहर आकर हमारे साथ युद्ध करो । तुम जैसे घमण्डी के लिए यह कायरता ठीक नहीं है । हमें

पराजित किये बिना तुम्हारा राज्याधिकार नहीं ठहरेगा । आओ, हमें हराओ तो!"

"मुझे राज्य की जरूरत नहीं, तुम्हीं उस पर शासन करो ।" दुर्योधन ने जवाब दिया ।

"तुम से मैं राज्य का दान नहीं चाहता । अलावा इसके दान करने के लिए अब तुम्हारे हाथ में राज्य ही कहाँ रहा? हमें हराकर राज्य ले लो । नहीं तो हमारे हाथों में हार जाओ ।" युधिष्ठिर ने कहा ।
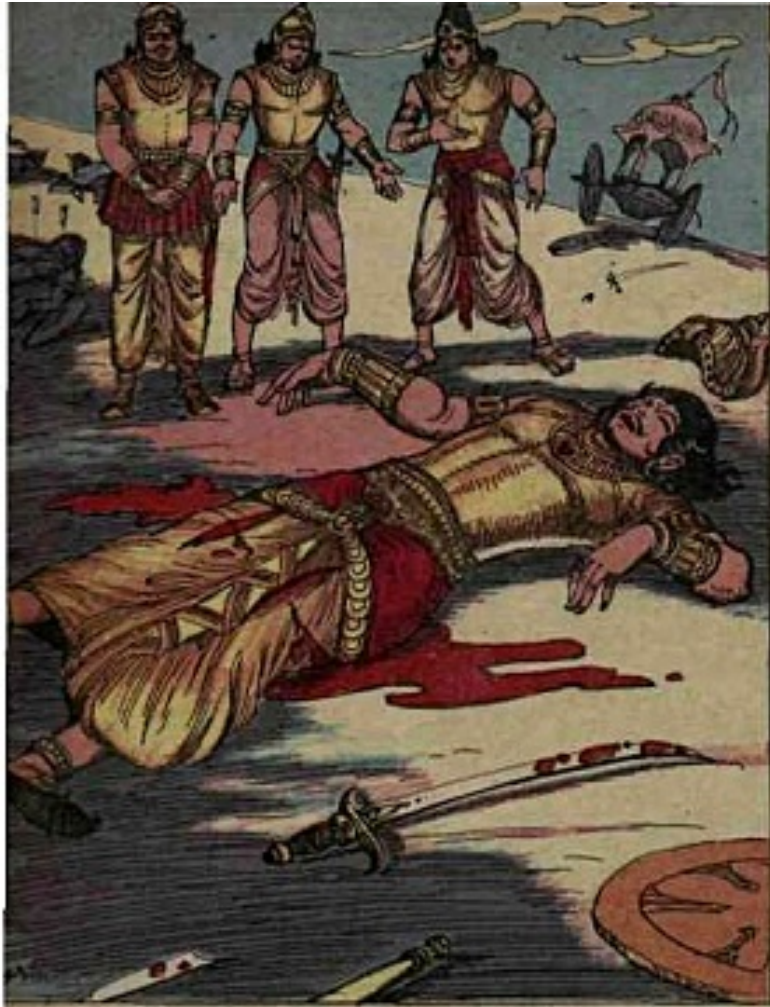
पांडवों के तीखे वचनों ने दुर्योधन को भड़काया, तब वह तालाब में से बाहर आया । उस समय दुर्योधन ने भीम के साथ गदायुद्ध किया, उस युद्ध में भीम ने दुर्योधन की जांघें तोड़ दीं ।

जांघें टूटने के कारण दुर्योधन नीचे गिरा हुआ था, पर मरा न था । तब कृपाचार्य, अश्वत्थामा तथा कृतवर्मा उसके पास आये और उसकी इस दुस्थिति पर शोक प्रकट किया । अश्वत्थामा ने दुर्योधन के समक्ष प्रतिज्ञा की कि वह उसी रात को पांडव तथा बचे हुए सभी पांचालों का वध करेगा । इस बात पर प्रसन्न हो दुर्योधन ने अश्वत्थामा को अपना सर्व सेनापति नियुक्त किया ।

इसके बाद वे तीनों योद्धा वहाँ से निकल पड़े और पांडवों के शिविरों के निकट जाकर एक जगह छिप गये । वहाँ पर एक जंगल था । उसमें एक हजार शाखाओं वाला एक बरगद का वृक्ष था । उसके नीचे उन तीनों ने विश्राम किया । अश्वत्थामा ने अपने शत्रुओं का अन्यायपूर्वक सोते समय वध करने का निश्चय कर लिया । क्योंकि पांडवों ने युद्ध में इस तरह के अनेक अन्याय किये थे । उसने कृपाचार्य और कृतवर्मा को भी इसके लिए मनवाया । तब उन्हें साथ ले पांडवों के शिविर के पास आ पहुँचा । कृपाचार्य और कृतवर्मा को उसने शिविर के द्वार पर खड़ा किया । वह तलवार हाथ में लेकर

भीतर पहुँचा। पहले उसने धृष्टद्युम्न को जगाकर उसे मार डाला। यह आहट पाकर कुछ लोग जाग पड़े और उस पर टूट पड़े। अश्वत्थामा ने उन सबको मार डाला। इसके बाद उसने सभी उप पांडवों का वध किया। तब तक शिविर में सोनेवाले सब लोग जाग पड़े, उनमें से कुछ लोग अश्वत्थामा से युद्ध करके मर गये। जो बाहर भाग रहे थे, उन्हें कृपाचार्य और कृतवर्मा ने मार डाला। इसके बाद तीनों ने मिलकर शिविर में आग लगायी। तब वे यह समाचार दुर्योधन को सुनाने के लिए वहाँ से निकल पड़े।

उस रात को पांडव शिविर में नहीं थे। यदि होते तो वे अश्वत्थामा के हाथों में मर गये होते या अश्वत्थामा के द्वारा होनेवाले इस दारुण हत्याकांड को रोक दिये होते।

कृपाचार्य, अश्वत्थामा और कृतवर्मा जब दुर्योधन के पास पहुँचे, तब वह अंतिम घड़ियाँ गिन- रहा था। उनके मुँह से उप पांडव आदि की मौत का समाचार सुनकर दुर्योधन बड़ा प्रसन्न हुआ और तब अपने प्राण त्याग दिये।

अपने पुत्र तथा रिश्तेदार युद्ध में विजयी होकर भी अश्वत्थामा के हाथों में मौत को प्राप्त समाचार सुनकर पांडव, द्रौपदी वगैरह बड़े दुखी हुए। भीम क्रोध में आया और अश्वत्थामा का वध करने चल पड़ा। तब द्रौपदी ने कहा—"मैंने सुना है कि अश्वत्थामा के मस्तक पर मणि है, उसका वध करके वह मणि मुझे ला दे तो मैं प्रसन्न हो जाऊँगी।"

इस पर भीम धनुष और बाण लेकर रथ पर निकल पड़ा। इसे देख कृष्ण ने भीम की मदद के लिए अर्जुन को भी साथ जाने का आदेश दिया। कृष्ण के साथ युधिष्ठिर और अर्जुन भी एक दूसरे रथ पर सवार हो चल पड़े। वे शीघ्र ही भीम से जा मिले। मगर वे भीम को लौटा नहीं पाये।

अर्जुन ने भी उसी अस्त्र का प्रयोग किया। दोनों अस्त्रों ने भयंकर रूप में आग उगलते एक दूसरे का सामना किया।

जब वे गंगा के तट पर पहुँचे, तब व्यास महर्षि, उनके अनुचर कई ऋषि और उनके साथ अश्वत्थामा दिखाई दिये। अश्वत्थामा की देह धूलि-धूसरित थी और वह वल्कल पहने हुए था। अश्वत्थामा को देखते ही भीम ने भयंकर गर्जन किया। अश्वत्थामा भीम तथा उसके पीछे आनेवाले कृष्ण, युधिष्ठिर और अर्जुन को देख चकित रह गया। उसे कुछ नहीं सूझा कि क्या किया जाय। तब उसने अपने पिता के द्वारा प्राप्त भयंकर ब्रह्मशिरोनामकास्त्र का आवाहन किया और उसे प्रयोग करते हुए कहा—"अपांडव हो जाय।" इस पर कृष्ण की प्रेरणा पाकर

तब व्यास और नारद आगे आये, उन्होंने दोनों को समझाया कि वे अपने अपने अस्त्रों को वापस ले लें। अर्जुन अपने अस्त्र को वापस ले सका, मगर अश्वत्थामा के द्वारा यह संभव न हुआ। उसने व्यास महर्षि से दीनतापूर्वक निवेदन किया—"महात्मा, मैंने भीम को देख भय के मारे इस अस्त्र का प्रयोग किया है। इसे वापस लेना मुझसे संभव नहीं हो रहा है। यह पांडवों का निर्मूल करके ही छोड़ेगा।"

कृष्ण ने यह बात सुनकर कहा—"अच्छी बात है! इस वक़्त पांडवों का अंकुर उत्तरा के गर्भ में है। उस पर तुम अपने अस्त्र का प्रयोग करो।"

अंत में ऋषियों ने यह समझौता किया कि अश्वत्थामा अपने मस्तक पर का मणि अर्जुन को देगा और अर्जुन उसे प्राणों के साथ छोड़ देगा। तब अश्वत्थामा ने अपने मस्तक का मणि निकालकर अर्जुन के हाथ दिया और वह जंगलों में तपस्या करने चला गया। भीम ने वह मणि ले जाकर द्रौपदी के हाथ दिया और समझाया कि अब चिंता न करो। द्रौपदी ने वह मणि

युधिष्ठिर के मस्तक पर धारण करने को दिया ।

उधर हस्तिनापुर में धृतराष्ट्र अपने सौ पुत्रों का युद्ध में मृत्यु को प्राप्त समाचार जानकर अपार दुख में डूब गया । संजय ने उसे समझाया—"तुम्हारे पुत्र ही क्या? अट्ठारह अक्षौहिणियों की सेना का भी विनाश हो गया है । दुनिया भर के राजा मर गये हैं । उन सब के प्रेत-संस्कार कराओ ।"

धृतराष्ट्र के पीछे गांधारी, कुंती तथा अंत:पुर की अन्य स्त्रियाँ रोते हुए युद्धभूमि में आ पहुँचीं । यह बात मालूम होते ही पांडव कृष्ण, सात्यकी तथा युयुत्स को साथ ले वहाँ पर आये ।

युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र को नमस्कार किया और उन्हें देखने आये हुए सभी लोगों का परिचय कराया । धृतराष्ट्र भीतर ही भीतर जल रहा था । उसने युधिष्ठिर का पहले आलिगन किया और बाद को भीम के साथ आलिंगन करने को बढ़ा । तब कृष्ण ने भीम को पीछे की ओर खींच लिया और भीम की मूर्ति को आगे ढकेल दिया । धृतराष्ट्र ने उस मूर्ति का सारी शक्ति लगाकर आलिंगन किया, वह मूर्ति चूर चूर हो गयी । अगर उस मूर्ति की जगह भीम होता तो वह ज़रूर मर जाता । क्योंकि धृतराष्ट्र की शक्ति एक हज़ार हाथियों की शक्ति है । इसलिए धृतराष्ट्र लोहे की मूर्ति को चूर-चूर करके नाक और मुँह से खून उगलते नीचे गिर गया । इसके बाद वह नकली रोना रोने लगा— "ओह, भीम! तुम्हें क्या हो गया?"

कृष्ण ने दुर्योधन को समझाया—"राजन, चिंता न करो । तुमने भीम को चूर्ण नहीं किया, लोहे की मूर्ति को किया है ।" वह मूर्ति दुर्योधन ने अपने गदायुद्ध के अभ्यास के लिए तैयार करवायी थी ।

इसके बाद कृष्ण ने धृतराष्ट्र को सांत्वना दी—"अब पांडवों को छोड़ मेरे पुत्र ही और कौन हैं?" यों कहते धृतराष्ट्र भीम, अर्जुन नकुल और सहदेव के शरीरों पर हाथ फेरने लगा ।

मित्र-भेद

[८]

सियार ने कौए को बक और केकड़े की कहानी यों सुनाई :

बक और केकड़े की कहानी

एक तालाब के किनारे एक बक निवास करता था। वह बूढ़ा हो गया था, इसलिए उसने विशेष श्रम के बिना मछलियाँ खानी चाहीं। वह पानी के किनारे विरक्त मन से खड़े हो समीप आयी हुई मछलियों को भी खाता न था।

मछलियों के साथ एक केकड़ा भी था। उसने बक के निकट जाकर पूछा—"मामा, लगता है, आप ने आज खाना-खेलना बंद कर दिया है। ऐसा क्यों?"

इस पर बक ने समझाया—"बहुत समय तक मछलियाँ खाकर आराम से मैंने अपनी जिंदगी बितायी। मछलियाँ मेरी मित्र हैं। तुम लोगों पर एक बड़ी विपत्ति आनेवाली है। इस बुढ़ापे में मैं सुख से दूर होता जा रहा हूँ। यही मेरी सबसे बड़ी चिंता है।"

"मामा, वह कैसी विपत्ति है?" केकड़े ने पूछा।

"आज सुबह कुछ मछुओं के बात करते सुना : यह एक बड़ा तालाब है। इसमें कई मछलियाँ हैं। इतवार के शाम तक बाक़ी चारों तालाबों में शिकार खेलना समाप्त करके सोमवार सवेरे यहाँ आ जाएँगे। हमने जो नये जाल तैयार किये हैं, उनसे मछलियों और अन्य जलचरों को फँसायेंगे। इसलिए एक सप्ताह के अन्दर इस तालाब में एक मछली या अन्य जलचर नहीं बचेगा। आज सोमवार है

अंतिम पृष्ठ का चित्र

है। तुम सब सहयोग दोगे तो मेरा प्रयत्न सफल हो सकता है। यहाँ से थोड़ी दूर पर एक बड़ा मंदिर है। मंदिर के पास एक तड़ाग है। उसमें कमल भरे हुए हैं। उस तड़ाग में मछलियाँ पकड़ना मना है। वहाँ पर तुम लोग सुरक्षित रह सकते हो! एक एक छोटे दल के रूप में तुम सबको अपनी पीठ पर ले जाकर मैं वहाँ पहुँचा सकता हूँ।" बक ने समझाया।

ये बातें सुन मछलियाँ खुशी से उछल पड़ीं। सब ने बक के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की। बक भी मन ही मन मुस्कुरा उठा। उसने सोचा कि मछलियों को दगा देकर उन्हें आसानी से खाया जा सकता है। यह सोचकर उस पापी बक ने मछलियों की प्रार्थना स्वीकार कर ली।

न? इस बुढ़ापे में मेरे मुँह का कौर भी चला जा रहा है।" बक ने कहा।

बक की कपट पूर्ण बातें सुनकर तालाब की मछलियाँ और अन्य प्राणी भय के मारे काँप उठे। उन सब ने अपनी आयु और ओहदे का ख्याल रखते हुए बक का 'पिता, दादा, नाना, मामा, भाई, मित्र और गुरु का संबोधन करते कहा–" अच्छा हुआ कि आप ने हमें इस खतरे की सूचना पहले ही दे दी। इस खतरे से हमें बचाना आप के लिए कोई असंभव बात न होगी।"

"मैं अंडज हूँ, मानव पिंडज हैं, भला मैं उनके साथ कैसी स्पर्धा कर सकता हूँ? फिर भी मेरे मन में एक विचार आ रहा

इसके बाद बक मछलियों के एक एक दल को अपनी पीठ पर चढ़ाकर मंदिर के तड़ाग की ओर चल पड़ा। पर वह तड़ाग के पास नहीं गया। एक पहाड़ी चट्टान पर उतरकर सब मछलियों को चट्टान पर डाल दिया और सबको खाता गया। दिन ब दिन उसकी प्रसन्नता बढ़ती जाने लगी। तालाब में रहनेवाली मछलियों को कोई संदेह न हो, इसलिए वह तड़ाग में आयी मछलियों से प्रति दिन संदेशा लाकर सुनाया करता था।

इस बीच केकड़े को भी अपनी जान का डर सताने लगा। मछुओं के आने का दिन निकट पड़ते देख उसने बक से बिनती की–"मामा, मेरी भी रक्षा करो न?"

रोज़ मछलियाँ खाकर बक भी ऊब चुका था। उसने सोचा कि अब उसे नया आहार मिलनेवाला है, यह सोचकर उसने केकड़े को अपनी पीठ पर बिठाया और उड़ते जाकर पहाड़ी चट्टान पर उतरने को हुआ।

"मामा, मंदिर कहाँ? गहरा तड़ाग कहाँ पर है?" केकड़े ने बक से पूछा।

बक ने व्यंग्यपूर्वक कहा–"उस चट्टान को देखते हो न? उस पर मेरे द्वारा लाई गयी सभी मछलियाँ शाश्वत रूप से शांति प्राप्त कर चुकी हैं।"

केकड़े ने बक की बातें सुनते ही झांककर देखा। चट्टान पर मछलियों की हड्डियाँ फैली हुई हैं। तब उसने अपने मन में सोचा–"इस दुनिया में अक्लमंद लोग अपने स्वार्थ के वास्ते मित्र होकर भी शत्रु के रूप में, शत्रु होकर मित्रों के रूप में अभिनय करते हैं। शत्रु होकर भी मित्रों जैसे अभिनय करनेवालों से मैत्री करने की अपेक्षा सांपों से मैत्री करना कहीं अच्छा है। बक ने इसके पहले सारी मछलियों को हजम कर डाला है। ये सब उन्हीं

मछलियों की हड्डियाँ हैं। उनके वास्ते बदला लेने का यही अच्छा मौक़ा है।"

बक चट्टान पर उतरने ही वाला था कि तब केकड़े ने उसे चट्टान पर गिराने के पहले ही बक के गले को जोर से कस लिया। उस हालत में बक केकड़े का कुछ बिगाड़ न सका। बक वहाँ से उड़ने को हुआ, तब केकड़े ने बक के कंठ को अपने तेज नाखूनों से इस तरह जोर से दबाया कि बक का कंठ कट गया।

इसके बाद केकड़ा बक का सिर लेकर तालाब के पास लौट आया। वहाँ पर बची हुई मछलियों ने केकड़े से पूछा–"भाई साहब, तुम क्यों लौट आये हो?"

केकड़े ने मछलियों को बक का सिर दिखाते हुए कहा–"इस दुष्ट ने हम सबको दगा दे दिया है। इस पापी की बातों में आकर बेचारी सारी मछलियाँ अपनी जान खो बैठी हैं। मैं इस विश्वासघात को मारकर उसका सिर लाया हूँ। मछुओं के आकर हमें जाल में फँसाने की बात सब झूठी है। अब हम आराम से यहाँ पर रह सकते हैं।"

सियार के मुँह से यह कहानी सुनकर कौए ने कहा–"मित्र, यह बताओ कि सांप को कैसे मार डाला जाय?"

सियार ने यों कहा: "तुम किसी मंदिर या तालाब के पास जाओ। धनियों का कोई रत्नहार या कोई क़ीमती आभूषण ले आओ। लोग तुम्हारा पीछा करेंगे। उनके देखते तुम उस आभूषण को सांप की बांबी में गिरा दो। वे लोग उस आभूषण के वास्ते बांबी को खोद डालेंगे। तब सांप बाहर निकलेगा, लोग उसे मार डालेंगे।"

कौए ने अपने घर जाकर यह उपाय अपनी पत्नी को सुनाया। दोनों तुरंत उड़कर राजमहल के तड़ाग के पास पहुँचे। थोड़ी देर में रानी नहाने तड़ाग के पास आ पहुँची। उसने अपने गहने निकालकर किनारे पर रख दिया और तड़ाग में उतरकर नहाने लगी। मादा कौआ झट रत्नहार को लेकर अपने घोंसलेवाले पेड़ की ओर धीरे से उड़ने लगी। इसे देख राजमहल के नौकर ज़ोर से चिल्लाते लाठियाँ लेकर उसके पीछे दौड़ पड़े।

मादा कौए ने रत्नहार को सांप की बांबी में गिरा दिया और वह पेड़ की एक डाल पर बैठे तमाशा देखने लगी। राजमहल के नौकरों ने रत्नहार के वास्ते बांबी को खोद डाला। सांप गुस्से में आकर बांबी से बाहर आया। सब ने मिलकर सांप को मार डाला और रत्नहार को लेकर राजमहल की ओर चले गये।

इस तरह कौए सांप की मुसीबत से बच रहें।

Chandamama, March '74

Photo by M. Natarajan
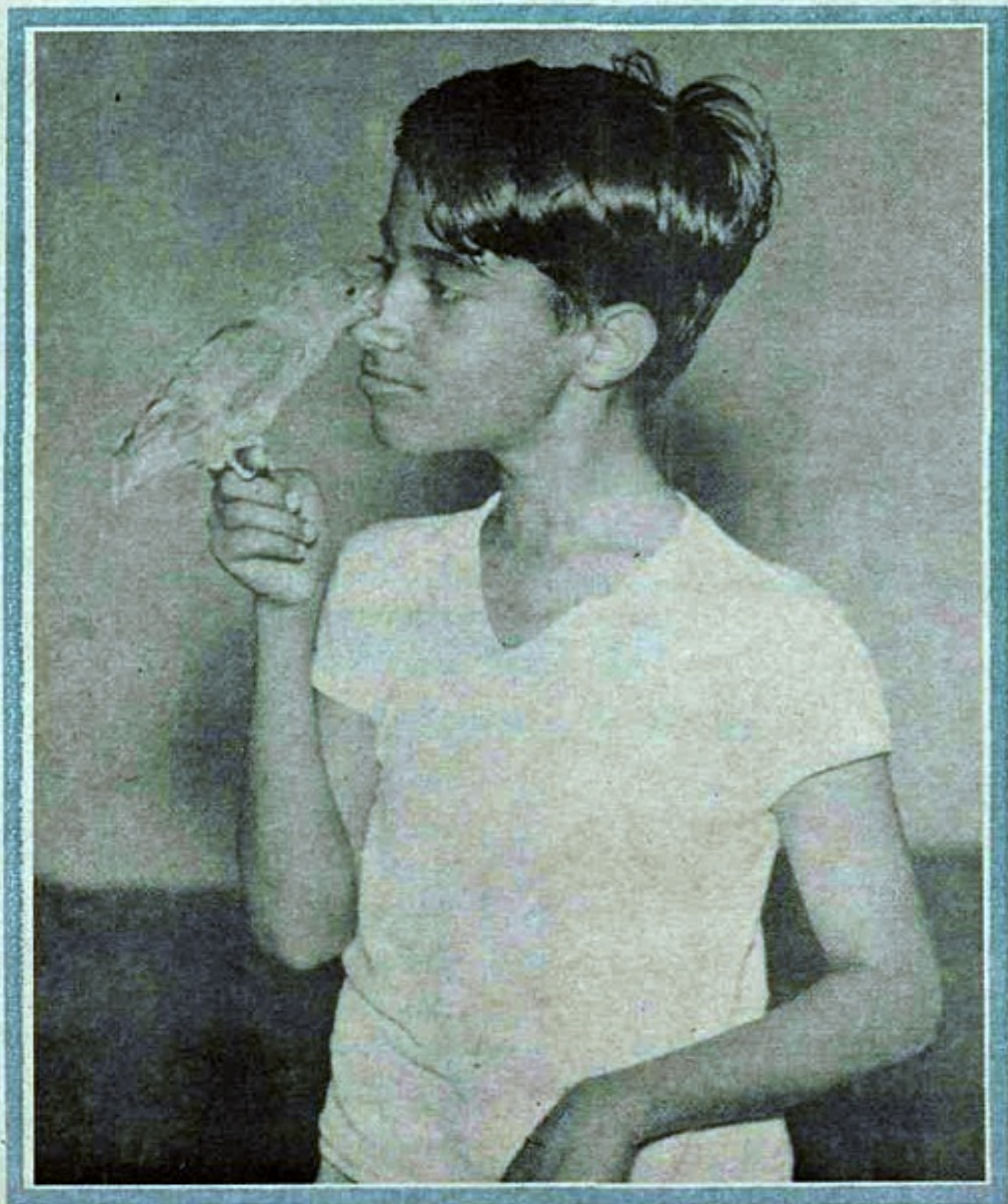
एन. जे. ४०८, चड्डियाँ स्ट्रीट
माई हीरा गेट, जलंधर - १

यह प्यार है, कोई खेल नहीं!

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २०)

★

★ परिचयोक्तियाँ मार्च ५ तक प्राप्त होनी चाहिए। सिर्फ़ कार्ड पर ही लिख भेजें।

★ परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबंधित हों, पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ मई के अंक में प्रकाशित की जायंगी!

चन्दामामा

इस अंक की कथा-कहानियाँ-हास्य-व्यंग्य

अमर वाणी ...	८	जब आँखें खुलीं ...	३३
यक्ष पर्वत ...	९	चोर पकड़ा गया ...	३८
पुरुष द्वेषिणी ...	१७	धारा नगर के पंडित ...	४६
मेहनत का बोझ ...	२४	महाभारत ...	४९
पूड़ियों का क़ानून ...	२८	मित्र-भेद-८ ...	५७
प्रसन्नांजनेयम् ...	३१	संसार के आश्चर्य ...	६१

दूसरा मुखपृष्ठ:
बिकानेर के दुर्ग में

तीसरा मुखपृष्ठ:
जंतर-मंतर में

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published. by B. VISWANATHA REDDI for Chandamama Publications,

१४६. अमेरिका में रूसी मंदिर

अलास्का (उत्तर अमेरिका) का थोड़ा हिस्सा रूस के अधीन में था। सिट्का नामक प्रदेश में रूसी अन्वेषकों ने इस ईसाई गिरजाघर का निर्माण किया और सिट्का को अलास्का की रूसी राजधानी बनाया। इस गिरजाघर का निर्माण १८०४ में हुआ था। १८६७ में अमेरिकनों ने रूसी चक्रवर्ती से अलास्का को ख़रीद लिया। हाल ही में अलास्का अमेरिका का ४९ वाँ राज्य बना।

Photo by Brahm Dev
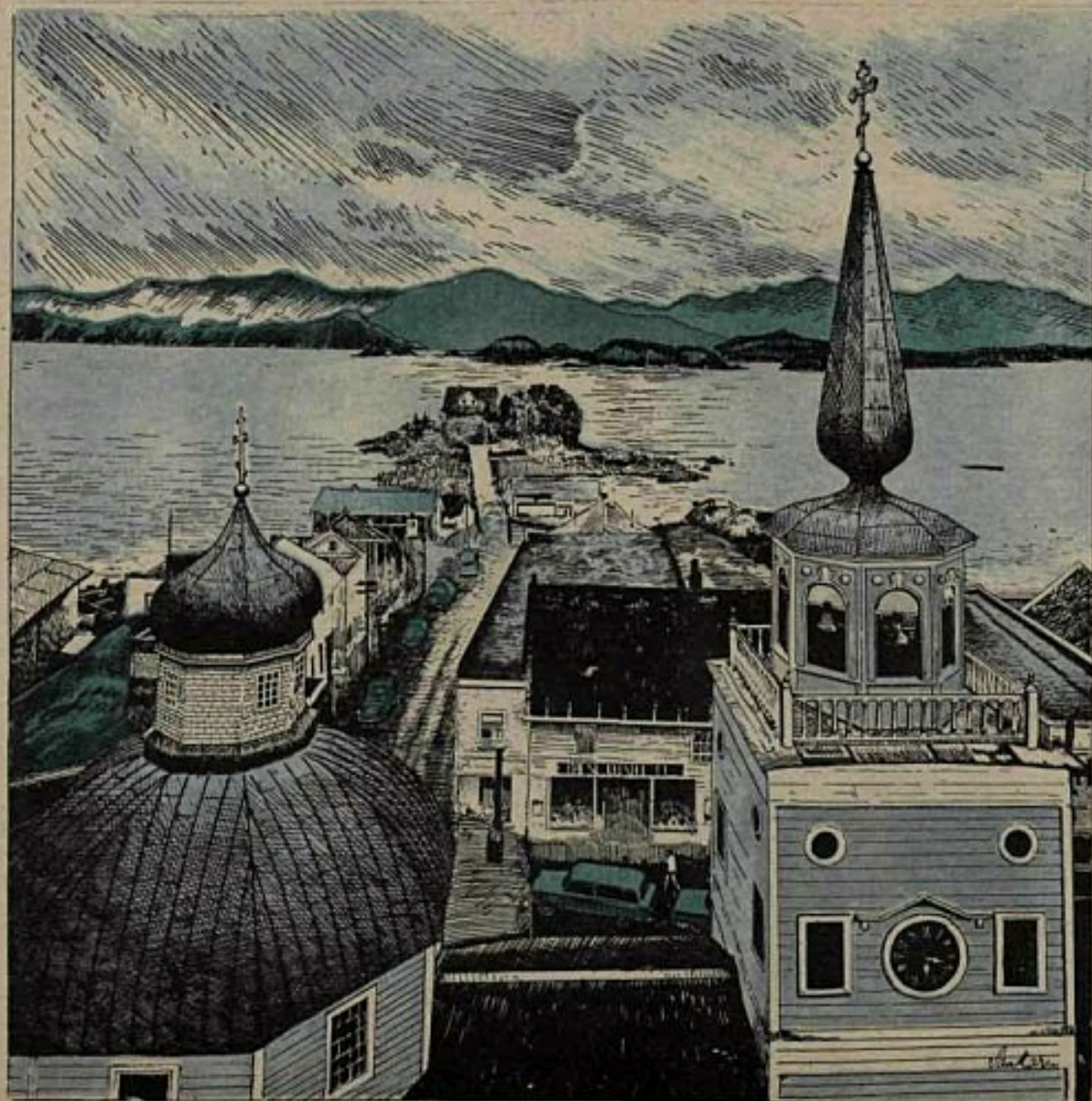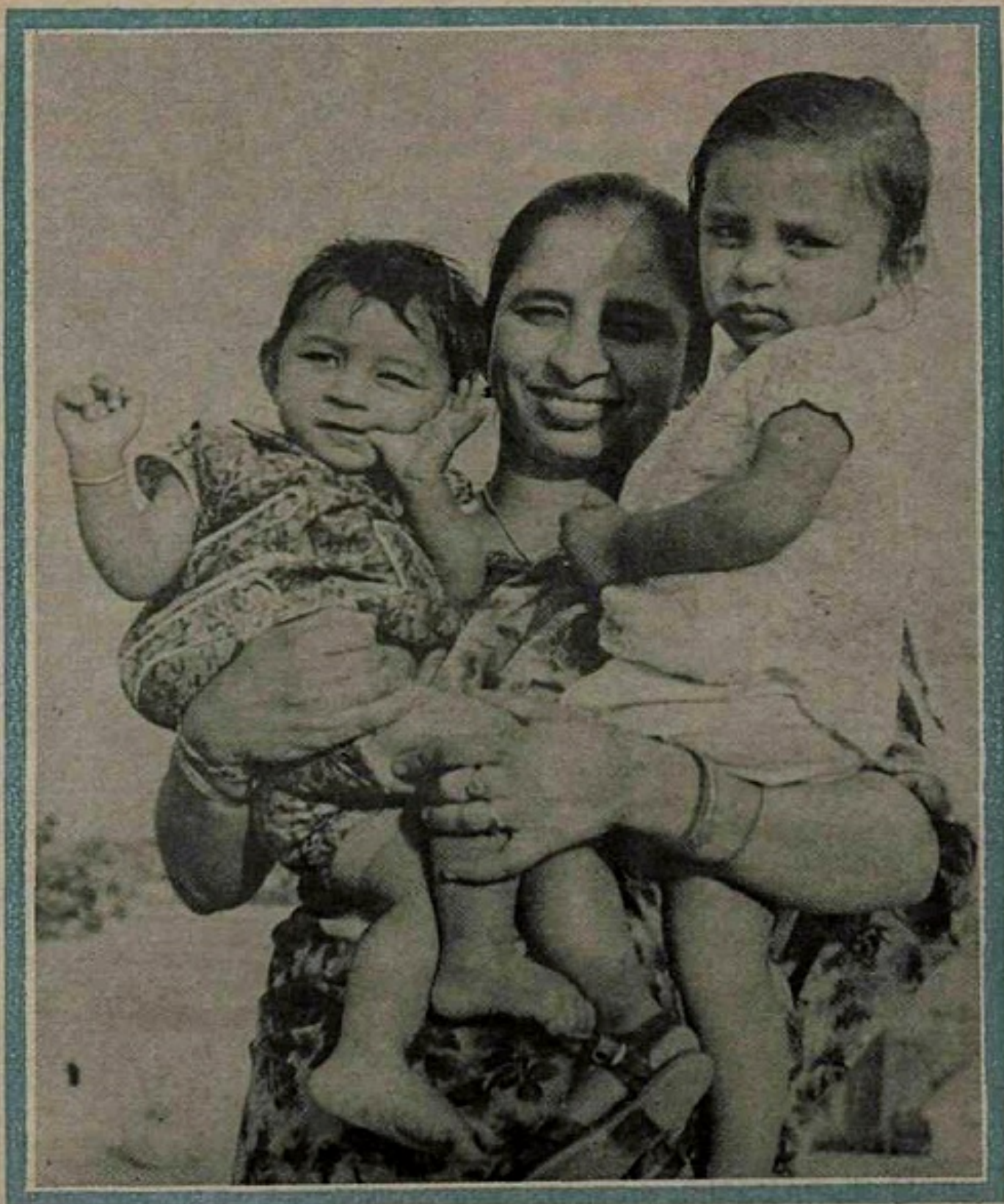
पुरस्कृत परिचयोक्ति

ममता का कोई मोल नहीं !

प्रेषक : सुरेश भारती
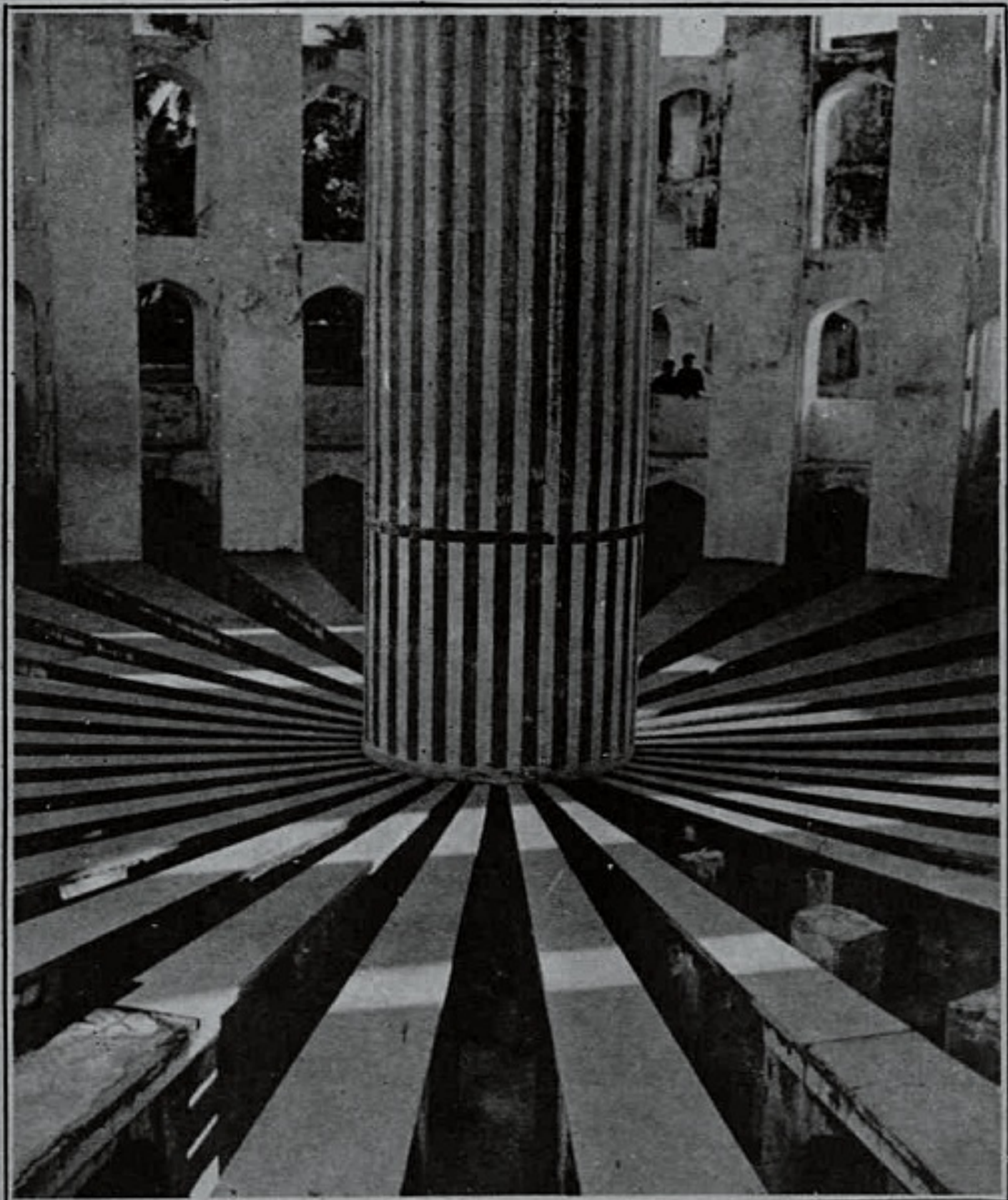
Photo by: **B. BHANSALI**

मित्र-भेद